।। ओ३म् ।।

अष्टाध्यायी प्रवेश

लेखक

आचार्य बलदेव नैष्ठिक

सम्पादक

ब्र.अरुणकुमार “आर्यवीर”

प्रकाशक

वानप्रस्थ साधक आश्रम

आर्य वन, रोजड़, पत्रालय सागपुर,
साबरकांठा, गुजरात ३८३३०७

✆ (०२७७०) २५७२२०, २५७२२३
दर्शन योग विद्यालय (०२७७४) २७७२१७,
(०२७७०) २५७२२४, २५७२२३

E-mail : darshanyog@icenet.net
Website : www.darshanyog.org

१६६१२२१

।। ओ३म् ।।

प्रकाशकीय

।। ओ३म् ।।

सम्मति

परम तपस्वी, उद्भट विद्वान्, नैष्ठिक ब्रह्मचारी, आदर्श गोभक्त, धर्मरक्षक, उदार स्वभाव, तितिक्षु, अहर्निश देशोद्धारमना, अनन्य ऋषिभक्त, गुरुदेव आचार्य श्री बलदेव जी महाराज के चरणों में इनका अन्तेवासी बनकर वेदवेदांगों के अध्ययन का सुअवसर सौभाग्य से कई वर्ष प्राप्त किया।

आपके अध्यापन का मुख्य विषय संस्कृत व्याकरण है। जिसे आज-कल भी अध्यापन करा रहे हैं। आश्चर्य का विषय है कि छात्रवृन्द आपके पास व्याकरण जैसे शुष्क विषय को पढ़ता हुआ भी ऊबता नहीं अपितु रसास्वाद का अनुभव करता है। आपकी अध्यापन शैली महाभाष्यकार पतंजलि तुल्य रोचक है।

'अष्टाध्यायी प्रवेश' आपकी रचना मैंने ध्यान से पढ़ी है। व्याकरण रूपी चक्रव्यूह में प्रवेश के लिए यह महारथी अर्जुन के गाण्डीव से कम नहीं। इसे पढ़कर छात्र व्याकरण के मूल ग्रन्थ अष्टाध्यायी को कष्टाध्यायी नहीं मानता। जैसा कि मैंने ऊपर आपकी व्याख्याशैली की चर्चा की, पुस्तक बड़ी ही सरल, सुबोधा, रोचक, और हृदयंगम है। इसे पढ़कर वैयाकरण व्याकरणरूपी विन्ध्यवन को नन्दनकानन के रूप में अनुभव करता है। व्याकरणाध्ययन की बलवती इच्छा उसमें जागृत हो उठती है। वह धनुर्धारा वीर अर्जुन के शब्दों में कह उठता है- "स्थितोऽस्मि गत सन्देह करिष्ये वचनं तव।"

आचार्य हरिदत्त
संस्थापक गुरुकुल भैयापुर लाढौत, रोहतक

।। ओ३म् ।।

सम्मति

श्रद्धेय आचार्य बलदेव जी नैष्ठिक ने "अष्टाध्यायी प्रवेश" ग्रन्थ संस्कृत व्याकरण अध्येताओं के लिए अत्यधिक परिश्रमपूर्वक मनोवैज्ञानिक रीति से लिखा है। पूज्य आचार्य जी व्याकरण के ग्रन्थ अष्टाध्यायी काशिका महाभाष्यादि का १० वर्ष गुरुकुल झज्झर तथा गुरुकुल कालवा में १३ वर्षों से अध्यापन कर रहे हैं। इतने लम्बे समय से श्रद्धेय आचार्य जी ने जो अनुभव प्राप्त किए हैं उसका इस ग्रन्थ में सहजता से अनुमान लगाया जा सकता है। आचार्य जी महाराज से निवेदन है कि इसी प्रकार आगे भी व्याकरण का सरलीकरण करते रहें। जिससे छात्रगण पाणिनीय व्याकरण को सुगमता से शीघ्रातिशीघ्र हृदयङ्गम कर सकें। अन्त में भगवान् से प्रार्थना है आपकी आयु "भूयश्च शरदः शतात्"।

होलिकोत्सव — पं.धर्मदेव "मनीषी" व्याकरणाचार्य

दिनाङ्क १६-३-१९८४ — स्नातक गुरुकुल झज्झर

भूमिका

जिस प्रकार सुदृढ़ आधार पर न बना हुआ पर्याप्त दीर्घ ऊँचा एवं सुन्दर भवन भी जीवन के लिए संशयात्मक ही रहता है। इसी प्रकार मूलभूत व्याकरण के तत्त्वों को पूर्व जाने बिना प्रथमावृत्ति से महाभाष्य तक का अध्ययन विद्यार्थी के लिए निराशाजनक ही रहता है। विद्यार्थियों की इस कठिनता को अनुभव करके "अष्टाध्यायी" प्रवेश पुस्तक लिखी है। पुस्तक कितनी लाभदायक है इसको स्वयं पाठक जान सकेंगे।

पुस्तक में निम्न बातों का ध्यान रखा गया है :-

१) प्रवेश सुन्दर हो। क्योंकि- Well begun half done. अर्थात् अच्छा आरम्भ होने से आधा कार्य समाप्त हो जाता है।
२) सरल भाषा में लिखने का यत्न किया गया है।
३) बीच-बीच में सरल उदाहरणों द्वारा भी समझाया गया है।
४) जिन शब्दों या सिद्धान्तों को पूर्व जनाया है उन्हीं को आगे लिखा है।
५) ऐसा यत्न किया है कि अध्यापक को कम परिश्रम करना पड़े एवं प्रवीण विद्यार्थी स्वयं भी समझ जाए।
६) यदि अध्यापक इसे पूर्व पढ़कर "वृद्धिरादैच्" सूत्र से पढ़ना आरम्भ करेंगे तो शीघ्र गति तथा समय व शक्ति की बचत होगी।
७) ऐसा यत्न किया है कि प्रवीण विद्यार्थी स्वयं समझ सके अथवा अध्यापक के थोड़े से संकेत से समझ जाए।

विद्यार्थी निम्न बातों का ध्यान रखे :-

१) आरम्भ में विद्यार्थी शीघ्रता न करे।
२) समझकर तथा स्मरण करके ही आगे बढ़े।
३) अध्यापक के निर्देश में प्रतिदिन पठित पाठ को सुनाता रहे।
४) पूर्व अपनी सञ्चिका में लिखे पुनः समझे या पढ़े।

कृतज्ञता प्रकाशन

१) स्वामी ओमानन्द जी महाराज- जिन तपोमूर्ति ने जीवन की धारा को मोड़कर मुझे इस रूप में खड़ा किया।

२) पं.सुदर्शनदेव जी- जिस विद्यानिधि ने बातचित में ही प्रत्याहार सूत्र पढ़ाकर एवं व्याकरण का महत्त्व दर्शाकर व्याकरण के लिए प्रवृत्त किया।

३) आचार्य देवमुनि जी, गुरु शंकरदेव जी एवं पं.राजवीर जी- जिन आचार्यों की कृपा से प्रथमावृत्ति से महाभाष्य तक सफल अध्ययन किया।

४) पं.महावीर जी मीमांसक- जिस दार्शनिक बुद्धि ने न्यायादि दर्शनों को पढ़ाया।

५) आचार्य रामप्रसाद जी एवं ब्रह्ममुनि जी- जिन सत्करणीय विद्वानों से निरुक्त पढ़ा एवं वेदार्थ सम्बन्ध में प्रकाश प्राप्त किया।

६) भक्त बृजमोहनलाल जीजिस विद्याप्रिय महात्मा ने पढ़ते समय पूर्ण आर्थिक व्यवस्था की।

७) भक्त दरयावसिंह जी- जिस परोपकारप्रिय न जीपयान शिक्षा के साथ-साथ पर्याप्त अनुभव सामग्री भी प्रदान की।

इन सभी उपकारकर्त्ताओं एवं अन्य सभी अलिखित सहयोगियों के प्रति हृदय से कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

बलदेव नैष्ठिक
आर्ष महाविद्यालय गुरुकुल कालवा
जीन्द हरयाणा

प्रकरण-सूचीपत्रम्

संज्ञा-सूचीपत्रम्

सिद्धि प्रथमभाग के प्रकरण में देखें

।।ओ३म्।।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।।
(यजु.२५/१९)

अष्टाध्यायी प्रवेश

प्रथमप्रकरणम्

सामान्यप्रकरणम्

प्रश्न :– अष्टाध्यायी किसे कहते हैं?

उत्तर :– आठ अध्यायों वाली पुस्तक का नाम अष्टाध्यायी है।

प्रश्न :– अष्टाध्यायी में क्या है?

उत्तर :– व्याकरण के सूत्र हैं।

प्रश्न :– व्याकरण किसे कहते हैं?

उत्तर :– जिससे शब्द शुद्ध किए जाएं उसे व्याकरण कहते हैं। व्याकरण के ज्ञान के बिना विद्यार्थी प्रकाशनादि की त्रुटि के कारण पुस्तक में लिखित अशुद्ध शब्द को भी घोट लेता है, तथा उस शब्द को पत्रादि में लिखकर अथवा विद्वानों के सम्मुख बोलकर उपहास का पात्र बनता है। अतः व्याकरण अवश्य पढ़ना चाहिए।

प्रश्न :– सूत्र किसे कहते हैं?

उत्तर :– संक्षिप्त नियम को सूत्र कहते हैं। व्याकरण के सूक्ष्म नियम व्याकरण के सूत्र कहलाते हैं।

प्रश्न :– अष्टाध्यायी किसने बनाई है?

उत्तर :– परोपकारप्रिय एवं सकल शास्त्रों के ज्ञाता महर्षि पाणिनी ने।

प्रश्न :– अष्टाध्यायी के प्रत्येक अध्याय में कितने पाद हैं?

उत्तर :– प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। इस प्रकार सब मिलाकर पूरी अष्टाध्यायी में ३२ पाद हैं।

प्रश्न :– प्रत्येक पाद में कितने सूत्र हैं, एवं कुल मिलाकर सारे सूत्रों की संख्या कितनी है?

उत्तर :–इसे निम्न तालिका से जानो।

अष्टाध्यायी

अध्याय	प्रथमः पादः	द्वितीयः पादः	तृतीयः पादः	चतुर्थः पादः	सूत्र संख्या योग
प्रथमोऽध्यायः	७४	७३	९३	१०९	३४९
द्वितीयोऽध्यायः	७१	३८	७३	८५	२६७
तृतीयोऽध्यायः	१५०	१८८	१७६	११७	६३१
चतुर्थोऽध्यायः	१७६	१४४	१६६	१४४	६३०
पचमोऽध्यायः	१३५	१४०	११९	१६०	५५४
षष्ठोऽध्यायः	२१८	१९८	१३८	१७५	७२९
सप्तमोऽध्यायः	१०३	११८	११९	९७	४३७
अष्टमोऽध्यायः	७४	१०८	११९	६७	३६८
	प्रतिज्ञासूत्र १	प्रत्याहार सूत्राणि १४			१५
				कुल योग	३९८०
			तीन हजार नौ सौ अस्सी		

प्रश्न :– अध्याय पाद एवं सूत्र को कैसे लिखें ?

उत्तर :–इनको क्रमशः प्रथम, द्वितीय और तृतीय संख्या से जानें। प्रथम संख्या अध्याय के लिए द्वितीय पाद के लिए और तृतीय सूत्र के लिए जानें। जैसे किसी ने कहा '४/३/५३' सूत्र निकालो, तो हमें चौथे अध्याय के तीसरे पाद का तिरेपनवां सूत्र "तत्र भवः" निकालना चाहिए। इसी प्रकार '१/१/१' कहने पर प्रथम अध्याय के प्रथम पाद का पहला सूत्र "वृद्धिरादैच्" को जानना चाहिए। एवमेव अन्यत्र भी समझना चाहिए।

प्रतिज्ञासूत्र– अथ शब्दानुशासनम्

प्रश्न :– 'अथ' शब्द का क्या अर्थ है ?

उत्तर :–अथ शब्द अधिकार को सूचित करता है, अर्थात् शब्दानुशासन का अधिकार (विषय) इससे आगे जानें।

प्रश्न :– शब्दानुशासन किसे कहते हैं ?

उत्तर :–शब्दानुशासन व्याकरण को कहते हैं।

इति सामान्य प्रकरणम्।

द्वितीयप्रकरणम्

प्रत्याहार–प्रकरणम्

प्रत्याहारसूत्राणि

१) अ इ उ ण्। ६) ल ण्। ११) ख फ छ ठ थ च ट त व्।
२) ऋ लृ क्। ७) ञ म ङ ण न म्। १२) क प य्।
३) ए ओ ङ्। ८) झ भ ञ्। १३) श ष स र्।
४) ऐ औ च्। ९) घ ढ ध ष्। १४) ह ल्।
५) ह य व र ट्। १०) ज ब ग ड द श्।

।।इति चतुर्दश प्रत्याहारसूत्राणि।।

इन चौदह सूत्रों को प्रत्याहार सूत्र कहते हैं।

प्रश्न :– प्रत्याहार किसे कहते हैं ?

उत्तर :–वर्ण आदि के सूक्ष्मरूप का नाम 'प्रत्याहार' है। जैसे 'अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ' इन सभी स्वर–वर्णों का संक्षिप्त रूप अच् (प्रत्याहार) है। इसी प्रकार 'क' से लेकर 'म' तक के स्पर्श–व्यञ्जन, तथा 'य र ल व' अन्तस्थ व्यञ्जन एवं श ष स ह उष्म–व्यञ्जन ये सभी ३३ व्यञ्जन–वर्ण, हल प्रत्याहार कहने से ग्रहण किए जाते हैं। इसी प्रकार अल् प्रत्याहार से समस्त स्वरों तथा व्यञ्जनों का ग्रहण होता है।

जैसे लोक में सहस्रों मनुष्यों को (सेनादि में) तत्काल बुलाने के लिए आदि अन्त के द्वारा संकेत किया जाता है। इसी प्रकार वर्णों का, प्रत्याहार विधि से सूक्ष्म रूप बनाकर पाणिनि जी महाराज ने भाषा वैज्ञानिकों को दांतों तले उंगली दबाने के लिए बाधित किया है।

आवश्यक संकेत = निम्न चार प्रश्नोत्तरों को ध्यान से पढ़ें। आगे इसी विषय का पुनरवलोकन कराया है, वहां पूर्णतया स्पष्ट हो जायेगा।

प्रश्न १.प्रत्याहार किस प्रकार बनाये जाते हैं ?

उत्तर :–आदिरन्त्येन सहेता, अर्थात् आदि वर्ण अन्तिम इत् वर्ण के साथ मिलकर प्रत्याहार बनाता है।

प्रश्न २.इत् किसे कहते हैं ?

उत्तर :–इत् व्याकरण शास्त्र में वर्ण का एक नाम है।

प्रश्न ३. इत् संज्ञा का प्रयोजन क्या है ?

उत्तर :- **तस्य लोपः** (१/३/९) अर्थात् जिस वर्ण का नाम इत् होता है उसका लोप हो जाता है ।

प्रश्न ४. लोप किसे कहते हैं ?

उत्तर :- **अदर्शनं लोपः** (१/१/५९) अर्थात् दिखाई न देने का नाम लोप है। जैसे 'अ इ उ ण्' इस प्रत्याहार सूत्र में 'ण्' की इत् संज्ञा होने से इस 'ण्' का लोप हो जाता है और अण् प्रत्याहार कहने से केवल अ इ उ का ही ग्रहण होता है।

ऊपर लिखित प्रक्रिया के अनुसार प्रत्याहार बनाने की विधि का पुनः अवलोकन –

'अ इ उ ण्' इस प्रत्याहार सूत्र में आदि वर्ण 'अ' अन्तिम इत् संज्ञक 'ण्' के साथ मिलकर अण् प्रत्याहार बनाता है।

प्रश्न :- अण् प्रत्याहार में किन-किन वर्णों को लिया जाता है ?

उत्तर :- 'अ इ उ' को। अर्थात् आदि 'अ' और बीच वाले 'इ उ' वर्णों का ग्रहण होगा। ण् का नहीं।

प्रत्याहार सूत्र- **अ इ उ ण्**

प्रत्याहार- अण्

वर्ण - अ, इ उ

प्रश्न :- अन्तिम ण् वर्ण का ग्रहण क्यों नहीं होता है ?

उत्तर :- अन्तिम ण् का अदर्शन होने से।

प्रश्न :- 'ऋ लृ क्' इस प्रत्याहार सूत्र के द्वारा कौन से प्रत्याहार बनाये जाते हैं ?

उत्तर :- 'अक्, इक्, उक्,' ये तीन।

प्रश्न :- 'अ इ उ' ये वर्ण ऋ लृ क् के आदि में नहीं आते ? पुनः इनके द्वारा उपरिलिखित प्रत्याहार कैसे बने ?

उत्तर :- आदि का अभिप्राय इत् वर्ण से पहले से है चाहे वह उसी सूत्र में हो अथवा पूर्व आने वाले प्रत्याहार सूत्रों में से हो । इस नियम से उपरिलिखित प्रत्याहार एवं अन्य तालिका में प्रदर्शित प्रत्याहार बने।

प्रश्न :- कुल कितने प्रत्याहार हैं ? तथा उनके क्या क्या उदाहरण हैं ?

उत्तर :- इसे निम्नलिखित तालिका से जानो।

प्रत्याहार तथा उनमें ग्रहण किये जाने वाले वर्णों का सूत्रोदाहरण सहित वर्णन :

	प्रत्याहार-सूत्र	प्रत्याहार	वर्ण	उदाहरण
१.	अ इ उ ण्	१. अण्	अ इ उ	**उरण् रपरः** (१/१/५०)
२.	ऋलक्	१. अक्	अ इ उ ऋ लृ	**अकः सवर्णे दीर्घः** (६/१/९७)
		२. इक्	इ उ ऋ लृ	**इको यणचि** (६/१/७५)
		३. उक्	उ ऋ लृ	**उगितश्च** (४/१/६)
३.	एओङ्	१. एङ्	ए ओ	**एङः पदान्तादति** (६/१/१०९)
४.	ऐ औच्	१. अच्	अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ	**अचोऽन्त्यादि टि** (१/१/६३)
		२. इच्	इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ	**इच् एकाचोऽम्प्रत्ययवच्च** (६/३/६७)
		३. एच्	ए ओ ऐ औ	**एचोऽयवायावः** (६/१/७८)
		४. ऐच्	ऐ औ	**वृद्धिरादैच्** (१/१/१)
५.	हयवरट्	१. अट्	अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र	**अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि** (८/४/२)
६.	लण्	१. अण्	अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल	**अणुदित् सवर्णस्य चाप्रत्ययः** (१/१/६९)
		२. इण्	इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल	**इण्कोः** (८/३/५७)

	३. यण्	य व र ल	इको यणचि (६/१/७५)
७. ञ म ङ ण न म्	१. अम्	अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल ञ म ङ ण न	पुमः खयम्परे (८/३/६)
	२. यम्	य व र ल ञ म ङ ण न	हलो यमां यमि लोपः (८/४/६३)
	३. ङम्	ङ ण न	ङमो ह्रस्वादचि ङमुण्नित्यम् (८/३/३२)
	४. ञम्	ञ म ङ ण न	ञमन्ताड्डः (उणा. १/११४)
८. झ भ ञ्	१. यञ्	य व र ल ञ म ङ ण न झ भ	अतो दीर्घो यञि (७/३/१०१)
९. घ ढ ध ष्	१. झष्	झ भ घ ढ ध	झषस्तथोर्धोऽधः (८/२/४०)
	२. भष्	भ घ ढ ध	एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः (८/२/३७)
१०. ज ब ग ड द श्	१. अश्	अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द	भो भगो अघो अपूर्वस्य योऽशि (८/३/१७)

	२. हश्	ह य व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द	**हशि च** (६/१/११४)
	३. वश्	व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द	**नेड्वशि कृति** (७/२/८)
	४. झश्	झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द	**झलां जश् झशि** (८/४/५२)
	५. जश्	ज ब ग ड द	**झलां जशोऽन्ते** (२/२/३९)
	६. बश्	ब ग ड द	**एको बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः** (८/२/३७)
११. खफछठथचटतव्	१. छव्	छ ठ थ च ट त	**नश्छव्यप्रशान्** (८/३/७)
१२. क प य्	१. यय्	य व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प	**अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः** (८/४/५७)
	२. मय्	म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ ट त क प	**मय उञो वो वा** (८/३/३३)
	३. झय्	झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प	**झयो होऽन्यतरस्याम्** (८/४/६१)
	४. खय्	ख फ छ ठ थ च ट त क प	**पुमः खय्यम्परे** (८/३/६)

	५. चय्	च ट त क प	**चयो द्वितीयाः शरि पौष्करसादेः** (वार्तिक सूत्र)
१३. श ष स र्	१. यर्	य व र ल ञ म ङ ण झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स	**यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा** (८/४/४४)
	२. झर	झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स	**झरो झरि सवर्णे** (८/३/६४)
	३. खर्	ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स	**खरि च** (८/४/५४)
	४. चर्	च ट त क प श ष स	**अभ्यासे चर्च** (८/४/५३)
	५. शर्	श ष स	**शरोऽचि च** (८/४/४८)
१४. हल्	१. अल्	अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल य म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह	**अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा** (१/१/६४)
	२. हल्	ह य व र ल ञ म ङ ण न झ ञ घ ढ ध ज ब ग इ द ख फ छ ठ थ च ट त क प श स ह	**हलन्त्यम्** (१/३/३)

३. वल्	व र ल य म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज व ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह	**लोपो व्योर्वलि** (६/१/६४)
४. रल्	र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह	**रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च** (१/२/२६)
५. झल्	झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह	**झलो झलि** (८/२/२६)
६. शल्	श ष स ह	**शल इगुपधादनिटः क्स** (३/१/४५)

अष्टाध्यायी सूत्रों में प्रत्याहार = ४१
उणादि कोष में प्रयुक्त प्रत्याहार = १
वाार्तिक कोष में प्रयुक्त प्रत्याहार = १
सर्वयोग ४३ प्रत्याहार

प्रश्न :– क्या ४३ प्रत्याहार ही बन सकते हैं?

उत्तर :–प्रत्याहार तो अनेक बन सकते हैं, परन्तु जिन प्रत्याहारों की सूत्रों में आवश्यकता थी उतने ही बनाए हैं। जैसे एक मनुष्य के पास २००० मनुष्य कार्य करनेवाले हैं, उसके पास १० कार्य हैं, तो वह उन मनुष्यों को १० भागों में कार्यानुसार बांटेगा, जबकि अनेक भाग बनाए जा सकते हैं।

प्रश्न :– क्या अष्टाध्यायी में प्रत्याहार, प्रत्याहारसूत्रोक्त वर्णों के ही बनते हैं अथवा प्रत्यय आदि के भी?

उत्तर :–प्रत्यय आदि के भी बनते हैं। जैसे सुप्, तिङ् इत्यादि। इनको आगे विभक्ति प्रकरण में विस्तार से समझाया जाएगा।

संकेत :– किस प्रत्याहारसूत्र से कौन-कौन से प्रत्याहार बनते हैं, तथा किन-किन सूत्रों में उनका प्रयोग आता है विद्यार्थी स्मरण करें।

अभ्यास

१) कपय्, लण्, हयवरट् सूत्रों से बने प्रत्याहार एवं उनके अन्तर्गत गृहीत होनेवाले वर्णों को लिखो।

२) चय्, इण्, अण् प्रत्याहार किन सूत्रों से बनते हैं?

३) अच्, हल, एवं अल प्रत्याहारों में कितने वर्ण आते हैं?

४) प्रत्याहार तथा प्रत्याहारसूत्रों में क्या अन्तर है?

५) छव्, रल्, खय्, यञ् प्रत्याहारों कें उदाहरणसूत्र लिखो।

इति प्रत्याहारप्रकरणम्।

तृतीयप्रकरणम्

अनुवृत्ति-पदच्छेद-विभक्तिप्रकरणम्

प्रत्याहार सूत्रों के पश्चात् "वृद्धिरादैच्" आदि सूत्रपाठ आरम्भ होता है। अतः अब सूत्र की व्याख्या के सम्बन्ध में वर्णन किया जाता है।

सूत्रों की व्याख्या निम्न आठ प्रकार से की जाती है– १) अनुवृत्ति, २) पदच्छेद, ३) विभक्ति, ४) समास, ५) अन्वय, ६) अर्थ, ७) उदाहरण, ८) सिद्धि।

इस प्रकरण में अनुवृत्ति, पदच्छेद एवं विभक्ति के विषय में ही बताया जाएगा, शेष आगे।

१. अनुवृत्ति

प्रश्न :– अनुवृत्ति किसे कहते हैं?

उत्तर :–सूत्र में आने वाले शब्दों का आगे आने वाले सूत्र से सम्बन्ध हो जाना "अनुवृत्ति" कहलाता है।

जैसे– **"वृद्धिरादैच"** सूत्र में प्रोक्त 'वृद्धि' शब्द का तथा **"अदेङ्गुणः"** में उक्त 'गुणः' शब्द का सम्बन्ध **"इको गुणवृद्धी"** सूत्र में होना।

एवं **"तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्"** सूत्र के सभी शब्दों का सम्बन्ध 'नाज्झलौ' में होना।

तथैव **"ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्"** सूत्र में उच्चारित 'प्रगृह्यम्' शब्द का सम्बन्ध **'अदसो मात्'** से लेकर **'ईदूतौ च सप्तम्यर्थे'** तक होता है। इसी प्रकार अनुवृत्ति के महत्व तथा कार्य को सर्वत्र समझें।

प्रश्न :– अनुवृत्ति ज्ञान से क्या लाभ होता है?

उत्तर :–पाणिनि जी की अष्टाध्यायी के अनुसार सूत्रार्थ करने में दो प्रकार के पद पाए जाते हैं। एक तो उसी सूत्र के, दूसरे ऊपर के सूत्रों से आए हुए। ऊपर से होनेवाले अनुवृत्ति पद का ज्ञान होना नितान्त आवश्यक है। उसके बिना वृत्ति रटने का भारी परिश्रम करना, पाणिनि महर्षि की तपस्या की हत्या तथा

अपने समय का अपव्यय करना है।

प्रश्न :– अधिकार तथा अनुवृत्ति में क्या भेद है ?

उत्तर :– (१) अधिकार सूत्र, अन्य सूत्रों में दूर तक जाता है। अनुवृत्ति कुछ ही सूत्रों में।

(२) अधिकार सूत्र अपने यहां कुछ प्रयोजन सिद्ध नहीं करता, अनुवृत्ति अपने यहां भी प्रयोजन सिद्ध करती है और अन्यत्र भी।

(३) अधिकारार्थ प्रोक्त सम्पूर्ण सूत्र, अगले सूत्रों में जाता है, परन्तु अनुवृत्ति अधिकतर सूत्र के किसी एक भाग की होती है। और कहीं कहीं सम्पूण की भी। जैसे– **'तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्'** इस सम्पूर्ण सूत्र की अनुवृत्ति **'नाज्झलौ'** में आती है।

प्रसिद्ध अधिकार सूत्र

१) **कारके** (१/४/२३) इसका अधिकार (१/४/५५) तक जाता है।

२) **प्राक्कडारात्समासः** (२/१/३) इसका अधिकार (२/२/३८) तक जाता है।

३) **सह सुपा** (२/१/४) इसका भी अधिकार (२/२/३८) तक है।

४) **अव्ययीभावः** (२/१/५) इसका अधिकार (२/१/२०) तक जाता है।

५) **अनभिहिते** (२/३/१) इसका अधिकार (२/३) की समाप्ति तक जाता है।

६) **आर्धधातुके** (२/४/३५) इसका अधिकार (२/४/५७) तक जाता है।

७) **प्रत्ययः** (३/१/१) इसका अधिकार पांचवे अध्याय की समाप्ति तक जाता है।

८) **परश्च** (३/१/२) इसका भी पांचवे अध्याय की समाप्ति तक जाता है।

९) **धातोः** (३/१/९१) इसका अधिकार (३/४/११७) तक जाता है।

१०) **कृत्याः** (३/१/९५) इसका अधिकार (३/१/१३३) तक जाता

है।

११) **ङ्याप्प्रातिपदिकात्** (४/१/१) पांचवे अध्याय की समाप्ति तक जाता है।

१२) **तद्धिताः** (४/१/७६) इसका अधिकार भी (५/४/१६०) तक जाता है।

१३) **समासान्ताः** (५/४/६८) इसका अधिकार (५/४/१६०) तक जाता है।

१४) **संहितायाम्** (६/१/७०) इसका अधिकार (६/१/१५२) तक जाता है।

१५) **अङ्गस्य** (६/४/१) इसका सातवें अध्याय की समाप्ति तक जाता है।

१६) **आर्धधातुके** (६/४/४६) इसका अधिकार (६/४/६९) तक जाता है।

१७) **पदस्य** (८/१/१६) इसका अधिकार (८/४/५४) तक जाता है।

१८) **पदात्** (८/१/१७) इसका अधिकार (८/१/६९) तक जाता है।

१९) **पूर्वत्रासिद्धम्** (८/२/१) इसका अष्टाध्यायी समाप्ति तक जाता है।

२०) **अपदान्तस्य मूर्द्धन्यः** (८/३/५५) इसका अधिकार (८/३/११९) तक जाता है।

इति संक्षिप्ताधिकार-सूत्र-निर्दशनम्

अभ्यास अनुवृति

सूत्र.१ वृद्धिरादैच्।
अनुवृत्ति–नहीं।
सू.२ अदेङ्गुणः।
अनु. नहीं।
सू.३ इको गुणवृद्धी।
अनु. वृद्धिः, गुणः।
सू.४ न धातुलोप आर्धधातुके।
अनु. इको गुणवृद्धी।
सू.५ क्ङिति च।
अनु. न, इको गुणवृद्धी।
सू.६ दीधीवेटीटाम्।
अनु. न, इको गुणवृद्धी।
सू.७ हलोऽनन्तराः संयोगः।
अनु. नहीं।

सू.८ मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः।
अनु. नहीं।
सू.९ तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्।
अनु. नहीं।
सू.१० नाज्झलौ।
अनु. तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्।
सू.११ ईदूदेद्विवचनं प्रगृह्यम्।
अनु. नहीं।
सू.१२ अदसो मात्।
अनु. ईदूदेत्, प्रगृह्यम्।
सू.१३ शे।
अनु. प्रगृह्यम्।
सू.१४ निपात एकाजनाङ्।
अनु. प्रगृह्यम्।
सू.१५ ओत्।
अनु. प्रगृह्यम्, निपातः।
सू.१६ सम्बुद्धौ शाकल्यस्येतावनार्षे।
अनु. प्रगृह्यम्, ओत्।
सू.१७ उञ ऊँ।
अनु. प्रगृह्यम्, शाकल्यस्येतावनार्षे।
सू.१८ ईदूतौ च सप्तम्यर्थे।
अनु. प्रगृह्यम्।
सू.१९ दाधा घ्वदाप्।
अनु. नहीं।
सू.२० आद्यन्तवदेकस्मिन्।
अनु. नहीं।
सू.२१ तरप्तमपौ घः।
अनु. नहीं।
सू.२२ बहुगणवतुडति संख्या।
अनु. नहीं।
सू.२३ ष्णान्ता षट्।
अनु. संख्या।
सू.२४ डति च।
अनु. संख्या, षट्।
सू.२५ क्तक्तवतू निष्ठा।
अनु. नहीं।
सू.२६ सर्वादीनि सर्वनामानि।
अनु. नहीं।
सू.२७ विभाषा दिक्समासे बहुव्रीहौ।
अनु. सर्वादीनि सर्वनामानि।
सू.२८ न बहुव्रीहौ।
अनु. सर्वादीनि सर्वनामानि।
सू.२९ तृतीयासमासे
अनु. सर्वादीनि सर्वनामानि, न।
सू.३० द्वन्द्वे च।
अनु. सर्वादीनि सर्वनामानि, न।
सू.३१ विभाषा जसि।
अनु. सर्वादीनि सर्वनामानि, न, द्वन्द्वे।
सू.३२ प्रथमचरमतयाल्पार्द्धकतिपयनेमाश्च।
अनु. सर्वनामानि, विभाषा जसि।
सू.३३ पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायाम्।

अनु. सर्वनामानि, विभाषा जसि।
सू.३४ स्वमज्ञातिधनाख्यायाम्।
अनु. सर्वनामानि विभाषा जसि।
सू.३५ अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः।
अनु. सर्वनामानि विभाषा जसि।
सू.३६ स्वरादिनिपातमव्ययम्।
अनु. नहीं।
सू.३७ तद्धितश्चासर्वविभक्तिः।
अनु. अव्ययम्।
सू.३८ कृन्मेजन्तः।
अनु. अव्ययम्।
सू.३९ क्त्वातोसुन्कसुनः।
अनु. अव्ययम्।
सू.४० अव्ययीभावश्च।
अनु. अव्ययम्।
सू.४१ शि सर्वनामस्थानम्।
अनु. नहीं।
सू.४२ सुडनपुंसकस्य।
अनु. सर्वनामस्थानम् ।
सू.४३ न वेति विभाषा।
अनु. नहीं।
सू.४४ इग्यणः सम्प्रसारणम्।
अनु. नहीं।
सू.४५ आद्यन्तौ टकितौ।
अनु. षष्ठी।
सू.४६ मिदचोऽन्त्यात्परः।
अनु. नहीं।
सू.४७ एच इग्घ्रस्वादेशे।
अनु. नहीं।
सू.४८ षष्ठी स्थानेयोगा।
अनु. नहीं।
सू.४९ स्थानेऽन्तरतमः।
अनु. षष्ठी स्थाने।
सू.५० उरण् रपरः।
अनु. षष्ठी स्थाने।
सू.५१ अलोऽन्त्यस्य।
अनु. षष्ठी, स्थाने।
सू.५२ ङिच्च।
अनु. अलः, अन्त्यस्य, षष्ठी स्थाने।
सू.५३ आदेः परस्य।
अनु. अलः, षष्ठी, स्थाने।
सू.५४ अनेकाल्शित्सर्वस्य।
अनु. षष्ठी, स्थाने।
सू.५५ स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ।
अनु. नहीं।
सू.५६ अचः परस्मिन् पूर्वविधौ।
अनु. स्थानिवदादेशः।
सू.५७ न पदान्त द्विर्वचनवरेयलोपस्वरसवर्णानुस्वारदीर्घजश्चर्विधिषु।
अनु. अचः परस्मिन्, स्थानिवत् आदेशः।
सू.५८ द्विवचनेऽचि।
अनु. अचः स्थानिवदादेशः।
सू.५९ अदर्शनं लोपः।

अनु. इति।
सू.६० प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः।
अनु. अदर्शनम्, इति।
सू.६१ प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्।
अनु. नहीं।
सू.६२ न लुमताङ्गस्य।
अनु. प्रत्ययलोपे, प्रत्ययलक्षणम्।
सू.६३ अचोऽन्त्यादि टि।
अनु. नहीं।
सू.६४ अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा।
अनु. नहीं।
सू.६५ तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य।
अनु. नहीं।
सू.६६ तस्मादित्युत्तरस्य।
अनु. निर्दिष्टे
सू.६७ स्वं रूपं शब्दस्याशब्दसंज्ञा।
अनु. नहीं।
सू.६८ अणुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः।
अनु. स्वं रूपम्।
सू.६९ तपरस्तत्कालस्य।
अनु. सवर्णस्य, स्वं रूपम्।
सू.७० आदिन्त्येन सहेता।
अनु. स्वं, रूपम्।
सू.७१ येनविधिस्तदन्तस्य
अनु. स्वं, रूपम्।
सू.७२ वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद् वृद्धम्।
अनु. नहीं।
सू.७३ त्यदादीनि च।
अनु. वृद्धम्।
सू.७४ एङ् प्राचां देशे।
अनु. यस्याचामादि, वृद्धम्।

अभ्यास

१) इको गुणवृद्धी, ष्णान्ता षट्, ओत, द्विर्वचनेऽचि, त्यादादीनि च सूत्रों में अनुवृत्ति बताओ।
२) ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्, वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद् वृद्धम्, सर्वादीनि सर्वनामानि, सूत्रों से क्रमशः प्रगृह्यम्, वृद्धम्, सर्वनामानि पदों की अनुवृत्ति कहां तक जाती है लिखो।
३) अनुवृत्ति किसे कहते है?

२. पदच्छेद

प्रश्न :- पदच्छेद किसे कहते है?
उत्तर :- सूत्र में आने वाले पदों को भिन्न-भिन्न करना पदच्छेद कहलाता है। जैसे- सूत्र **वृद्धिरादैच्।** पदच्छेद- वृद्धिः + आदैच्।
प्रश्न :- वृद्धिः, यह पद सूत्र में 'वृद्धिर्' ऐसा रेफान्त है, पदच्छेद होने पर विसर्गान्त कैसे हुआ?
उत्तर :- सन्धि नियम से।
सूत्र :- **अदेङ्गुणः।** पदच्छेद- अदेङ् + गुणः।
सूत्र :- **इको गुणवृद्धी।** पदच्छेद- इकः + गुणवृद्धी।
संकेत :- सूत्र में 'इकः' के स्थान पर पूर्ववत् सन्धि नियम से 'इको' बना।
सूत्र :- **न धातुलोप आर्धधातुके।** पदच्छेद- न + धातुलोपे + आर्धधातुके। यहां पर भी पदच्छेद में प्रदर्शित 'धातुलोपे' शब्द को सूत्र में सन्धि नियम से 'धातुलोप' ऐसा हुआ।
सूत्र :- **क्ङिति च।** पदच्छेद- क्ङिति + च।
सूत्र :- **दीधीवेवीदाम्।** पदच्छेद- दीधीवेवीटाम् (सारा सूत्र एक पद है)।
सूत्र :- **हलोऽनन्तराः संयोगः।** पदच्छेद- हलः + अनन्तराः + संयोगः। (सन्धि नियम से ही 'हलः + अनन्तराः' पदों को सूत्र में 'हलोऽनन्तराः' हो गया है।)
सूत्र :- **मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः।** पदच्छेद- मुखनासिकावचनः + अनुनासिकः। पूर्ववत्- 'मुखनासिकावचनः + अनुनासिकः' को 'मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः' हुआ।
सूत्र :- **तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्।** पदच्छेद- तुल्यास्यप्रयत्नम् + सवर्णम्।
सूत्र :- **नाज्झलौ।** पदच्छेद- न + अज्झलौ। यहां सन्धिसूत्र 'अकः सवर्णे दीर्घः (६/१/९८) से न का अ तथा अज्झलौ का अ मिलकर 'आ' हो गया।
सूत्र :- **ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्।**

पदच्छेद– ईदूदेत् + द्विवचनम् + प्रगृह्यम्।

सूत्र :– **अदसो मात्।** पदच्छेद– अदसः + मात्।

सूत्र :– **शे।** पदच्छेद– शे एक ही पद है।

सूत्र :– **निपात एकाजनाङ्।** पदच्छेद– निपातः + एकाच् + अनाङ्।

इसी प्रकार पदच्छेद के नियम को सर्वत्र समझना चाहिए।

३. विभक्ति

प्रश्न :– विभक्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर :– विभाग को विभक्ति कहते हैं। 'विभक्ति' सूत्र से सुप् को तीन-तीन करके सात भागों में एवं तिङ् के तीन-तीन को तीन पुरुषों में बांटा गया है। इनको विभक्ति कहते हैं।

प्रश्न :– सुप् किसे कहते है ?

उत्तर :– सुप् प्रत्याहार को कहते है।

प्रश्न :– सुप् प्रत्याहार, कैसे बनता है?

उत्तर :– **स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्य-स्ङसोसाम्ङ्योस्सुप्** (अ.४/१/२) इस सूत्र का पूर्वदर्शित प्रत्याहार बनाने वाली विधि के अनुसार, आदि 'सु' अन्तिम इत् वर्ण 'प' के साथ मिलकर सुप् प्रत्याहार बनता है।

प्रश्न :– सुप् में कौन-कौन से प्रत्यय है ?

उत्तर :– सुप की सात विभक्तियों एवं तीनों वचनों में निम्न प्रत्यय हैं–

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमाविभक्ति	सु	औ	जस्
द्वितीयाविभक्ति	अम्	औट्	शस्
तृतीयाविभक्ति	टा	भ्याम्	भिस्
चतुर्थीविभक्ति	ङे	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमीविभक्ति	ङसि	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठीविभक्ति	ङस्	ओस्	आम्
सप्तमीविभक्ति	ङि	ओस्	सुप्

इस प्रकार सुप् प्रत्याहार में २१ प्रत्यय हैं।

प्रश्न :– वचन कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर :– जैसा कि ऊपर दिखाया जा चुका है, वचन तीन होते हैं। एकवचन, द्विवचन और बहुवचन। एकवचन से एक का बोध होता है। द्विवचन से दो का बोध होता है। बहुवचन से बहुतों का बोध होता है।

प्रश्न :– तिङ् किसे कहते हैं ?

उत्तर :– **तिप्तस्झिसिप्थस्थमिब्वस्मस्तातांझथासाथांध्वमिड्वहिमहिङ्** (३/४/७८) इस सूत्र का आदि 'ति' अन्तिम इत् वर्ण 'ङ्' के साथ मिलकर तिङ् प्रत्याहार बनता है।

प्रश्न :– तिङ् की विभक्तियां अर्थात् पुरुष किस प्रकार हैं ?

उत्तर :– तिङ् के पुरुष निम्न प्रदर्शित विधि के अनुसार बनते हैं–

		एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
परस्मैपद	प्रथमपुरुष	तिप्	तस्	झि
	मध्यमपुरुष	सिप्	थस्	थ
	उत्तमपुरुष	मिप्	वस्	मस्
आत्मनेपद	प्रथमपुरुष	त	आताम्	झ
	मध्यमपुरुष	थास्	आथाम्	ध्वम्
	उत्तमपुरुष	इट्	वहिङ्	महिङ्

तिङ् प्रत्याहार में ये १८ प्रत्यय बनते हैं, जिनको दो भागों में विभक्त करके, प्रथम ९ प्रत्ययों को 'परस्मैपद' तथा शेष ९ प्रत्ययों को 'आत्मनेपद' नाम से पुकारा जाता है।

प्रश्न :– सूत्रों के अन्तर्गत आने वाले पदों की विभक्तियों को जानने की क्या विधि है ?

उत्तर :– सूत्रस्थ पदों की विभक्तियों को जानने के लिए निम्न शब्दों के रूप स्मरण करने चाहिएं। यथा वेद, हरि, सर्व, साधु, कर्तृ, गो, रै, लता, मति, वधू, नदी, वाच्, फल, दधि, मधु।

यद्यपि इन शब्दों के अतिरिक्त भिन्न शब्दरूपों के समान चलने वाले पद भी सूत्रों में दिखाई देते हैं; पुनरपि अधिकतर पदों की विभक्तियों को उपर्युक्त शब्दों के रूपानुसार जाना जा सकता है, अतः इन्हीं के रूप आगे दिए जाते हैं।

पुल्लिङ्ग शब्दों के रूप

अकारान्त 'वेद'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमाविभक्ति	वेदः	वेदौ	वेदाः
द्वितीयाविभक्ति	वेदम्	वेदौ	वेदान्
तृतीयाविभक्ति	वेदेन	वेदाभ्याम्	वेदैः
चतुर्थीविभक्ति	वेदाय	वेदाभ्याम्	वेदेभ्यः
पञ्चमीविभक्ति	वेदात्	वेदाभ्याम्	वेदेभ्यः
षष्ठीविभक्ति	वेदस्य	वेदयोः	वेदानाम्
सप्तमीविभक्ति	वेदे	वेदयोः	वेदेषु
सम्बोधन	हे वेद!	हे वेदौ!	हे वेदाः!

इकारान्त 'हरि'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	हरिः	हरी	हरयः
द्वि.	हरिम्	हरी	हरीन्
तृ.	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
च.	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
प.	हरेः	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
ष.	हरेः	हर्योः	हरीणाम्
स.	हरौ	हर्योः	हरिषु
सम्बो.	हे हरे !	हे हरी !	हे हरयः !

ऋकारान्त 'कर्तृ'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	कर्त्ता	कर्त्तारौ	कर्त्तारः
द्वि.	कर्त्तारम्	कर्त्तारौ	कर्त्तॄन्
तृ.	कर्त्रा	कर्त्तृभ्याम्	कर्त्तृभिः
च.	कर्त्रे	कर्त्तृभ्याम्	कर्त्तृभ्यः
प.	कर्त्तुः	कर्त्तृभ्याम्	कर्त्तृभ्यः
ष.	कर्त्तुः	कर्त्रोः	कर्त्तॄणाम्
स.	कर्त्तरि	कर्त्रोः	कर्त्तृषु
सम्बो.	हे कर्त्तः!	हे कर्त्तारौ!	हे कर्त्तारः!

'सर्व' सर्वनाम

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वि.	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृ.	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
च.	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
प.	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
ष.	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
स.	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु
सम्बो.	हे सर्व !	हे सर्वौ !	हे सर्वे !

उकारान्त 'साधु'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	साधु	साधू	साधवः
द्वि.	साधुम्	साधू	साधून्
तृ.	साधुना	साधुभ्याम्	साधुभिः
च.	साधवे	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
प.	साधोः	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
ष.	साधोः	साध्वोः	साधूनाम्
स.	साधौ	साध्वोः	साधुषु
सम्बो.	हे साधो!	हे साधू!	हे साधवः!

ऐकारान्त 'रै'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	राः	रायौ	रायः
द्वि.	रायम्	रायौ	रायः
तृ.	राया	राभ्याम्	राभिः
च.	राये	राभ्याम्	राभ्यः
प.	रायः	राभ्याम्	राभ्यः
ष.	रायः	रायोः	रायाम्
स.	रायि	रायोः	रासु
सम्बो.	हे राः!	हे रायौ!	हे रायः!

शब्दरूप स्त्रीलिङ्

अकारान्त 'लता'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	लता	लते	लताः
द्वि.	लताम्	लते	लताः
तृ.	लतया	लताभ्याम्	लताभिः
च.	लतायै	लताभ्याम्	लताभ्यः
प.	लतायाः	लताभ्याम्	लताभ्यः
ष.	लतायाः	लतयोः	लतानाम्
स.	लतायाम्	लतयोः	लतासु
सम्बो.	हे लते !	हे लते !	हे लताः !

इकारान्त 'मति'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	मतिः	मती	मतयः
द्वि.	मतिम्	मती	मतीः
तृ.	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
च.	मत्यै, मतये	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
प.	मत्याः, मतेः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
ष.	मत्याः, मतेः	मत्योः	मतीनाम्
स.	मत्याम्, मतौ	मत्योः	मतिषु
सम्बो.	हे मते !	हे मती !	हे मतयः

ऊकारान्त 'वधू'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	वधूः	वध्वौ	वध्वः
द्वि.	वधूम्	वध्वौ	वधूः
तृ.	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
च.	वध्वै	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
प.	वध्वाः	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
ष.	वध्वाः	वध्वोः	वधूनाम्
स.	वध्वाम्	वध्वोः	वधूषु
सम्बो.	हे वधु !	हे वध्वौ !	हे वध्वः!

हलन्त 'वाच्'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	वाक्, वाग्	वाचौ	वाचः
द्वि.	वाचम्	वाचौ	वाचः
तृ.	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भिः
च.	वाचे	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
प.	वाचः	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
ष.	वाचः	वाचोः	वाचाम्
स.	वाचि	वाचोः	वाक्षु
सम्बो.	हे वाक् ! हे वाग् !	हे वाचौ !	हे वाचः!

ओकारान्त 'गो'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	गौः	गावौ	गावः
द्वि.	गाम्	गावौ	गाः
तृ.	गवा	गोभ्याम्	गोभिः
च.	गवे	गोभ्याम्	गोभ्यः
प.	गोः	गोभ्याम्	गोभ्यः
ष.	गोः	गवोः	गवाम्
स.	गवि	गवोः	गोषु
सम्बो.	हे गौः !	हे गावौ !	हे गावः !

अकारान्त 'फल' नपुसकलिङ

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	फलम्	फले	फलानि
द्वि.	फलम्	फले	फलानि
तृ.	फलेन	फलाभ्याम्	फलैः
च.	फलाय	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
प.	फलात्	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
ष.	फलस्य	फलयोः	फलानाम्
स.	फले	फलयोः	फलेषु
सम्बो.	हे फल !	हे फले !	हे फलानि !

ईकारान्त 'नदी' स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	नदी	नद्यौ	नद्यः
द्वि.	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृ.	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
च.	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
प.	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
ष.	नद्याः	नद्यौः	नदीनाम्
स.	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
सम्बो.	हे नदि !	हे नद्यौ !	हे नद्यः !

उकारान्त 'मधु' नपुंसक

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	मधु	मधुनी	मधूनि
द्वि.	मधु	मधुनी	मधूनि
तृ.	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
च.	मधुने	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
प.	मधुनः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
ष.	मधुनः	मधुनोः	मधूनाम्
स.	मधुनि	मधुनोः	मधुषु
सम्बो.	हे मधो ! हे मधु !	हे मधुनी !	हे मधूनि !

इकारान्त 'दधि' नपुंसक

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र.	दधि	दधिनी	दधीनि
द्वि.	दधि	दधिनी	दधीनि
तृ.	दध्ना	दधिभ्याम्	दधिभिः
च.	दध्ने	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
प.	दध्नः	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
ष.	दध्नः	दध्नोः	दध्नाम्
स.	दध्नि, दधनि	दध्नोः	दधिषु
सम्बो.	हे दधे ! हे दधि !	हे दधिनी !	हे दधीनि !

प्रश्न :– प्रत्याहार सूत्रों में विभक्ति कैसे जानें ?

उत्तर :– सभी प्रत्याहार सूत्रों के हलन्त होने के कारण वाच् के समान रूप समझने चाहियें। अतः सभी प्रथमा विभक्ति एकवचन में होते हैं।

जैसे :– अइउण् १/१ वाच् के समान
ऋलृक् १/१ वाच् के समान
एओङ् १/१ वाच् के समान

प्रश्न :– विभक्ति तथा वचनों को संक्षेप में लिखने की क्या विधि है ?

उत्तर :– विभक्ति तथा वचनों को क्रमशः दो संख्याओं से प्रकट किया जाता है। प्रथम संख्या विभक्ति के लिए, दूसरे वचन के लिए समझनी चाहिये। जैसे– यदि हमें द्वितीया विभक्ति का बहुवचन कहना हो तो उसे इस प्रकार लिखेंगे '२/३' इसके नमूने के लिए निम्न कुछ संकेतों को देखोः–

प्रथमा विभक्ति एकवचन = १/१
द्वितीया विभक्ति बहुवचन = २/३
सप्तमी विभक्ति द्विवचन = ७/२
} इसी प्रकार सभी विभक्ति एवं वचनों के संकेतों को जाने।

प्रश्न :– वृद्धिरादैच् सूत्र में विभक्ति कैसे जानें ?

उत्तर :– वृद्धि शब्द का रूप मति के सदृश होने से– वृद्धिः १/१ तथा आदैच् वाच् के समान होने से– आदैच् १/१

सूत्र :– अदेङ् गुणः।

विभक्ति वचन :– अदेङ् १/१ वाच् के समान।
गुणः १/१ वेद के समान

सूत्र :– इको गुणवृद्धी।

वि.व.:– इकः ६/१ वाच् के समान।
गुणवृद्धी १/२ मति के समान।

सूत्र :– न धातुलोप आर्धधातुके।

वि.व.:– न अव्ययपद

धातुलोपे ७/१ फल के समान।
आर्धधातुके ७/१ फल के समान।

प्रश्न :– 'न' शब्द की विभक्ति न लिखकर अव्यय लिखा। अव्यय किसे कहते हैं?

उत्तर :– अव्यय का स्वरूप :–

सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु।
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्।।

अर्थात् जो तीनों लिङ्गों में समान हो और सभी विभक्तियों में समान रहे, तथा सभी वचनों में भी समान रहे, ऐसा जो कभी बदलता नहीं है, उसे अव्यय कहते है। अतः 'न' को अव्यय लिखा है। अव्यय का चिह्न 'अ.प.' लिखना चाहिये। अ. = अव्यय, प.= पद। अ.प.= अव्यय पद।

प्रश्न :– लिङ्ग कितने होते हैं?

उत्तर :– तीन– पुलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग, नपुंसकलिङ्ग।

प्रश्न :– धातुलोप में विभक्ति करते समय ए अन्त में कैसे लिखा? सूत्र में तो धातुलोपे शब्द नहीं था?

उत्तर :– यहां मूल शब्द 'धातुलोपे' ही था, परन्तु आगे आर्धधातुके का 'आ' समक्ष होने से 'ए' के स्थान पर सन्धि विषय में आने वाले सूत्रों से 'अय्' होकर 'य्' का लोप हो जाता है। जैसा कि पहले पदच्छेद-प्रकरण में भी दिखा चुके हैं।

सूत्र :– क्ङिति च।

वि.व. :– क्ङिति ७/१ वाच् की तरह (क्ङित् से सप्तमी), च अ.प.

सूत्र :– दीधीवेवीटाम्।

वि.व. :– दीधीवेवीटाम् ६/३ वाच् की भांति।

प्रश्न :– दीधीवेवीटाम् में 'दीधी' की भिन्न विभक्ति कैसे नहीं लिखी?

उत्तर :– दीधीवेवीटाम् में तीन शब्द हैं, दीधी, वेवी, इट्। तीनों मिलकर (समस्त होकर) एक शब्द के रूप में परिणत हो जाते हैं, जिससे 'दीधीवेवीट् ऐसा शब्द हो जाता है। अतः इसी

दीधीवेवीट् से विभक्ति होगी। केवल दीधी या वेवी से नहीं।

सूत्र :– **हलोऽनन्तराः संयोगः।**

वि.व. :– हलः १/३ वाच् की तरह।
अनन्तराः १/३ देव की तरह।
संयोगः १/१ देव की तरह।

सूत्र :– **मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः।**

वि.व. :– मुखनासिकावचनः १/१ देव के समान।
अनुनासिकः १/१ देव के समान।
इसी प्रकार अग्रिम सूत्रों की विभक्तियों को भी उपरि प्रदत्त वेदादि शब्दों के अनुसार मिलान करके समझ लेवें।

विशेष :– देवादि अकारान्त पुलिङ्ग शब्दों के रूप भी वेद के समान होते हैं। अतः विभक्ति दर्शाने में देववत् भी लिखा गया है।

अभ्यास

१. वेद, लता, फल, वाच्, शब्दों के षष्ठी विभक्ति द्विवचन और बहुवचन के रूप में लिखो।
२. कर्त्तृ, हरि, गो शब्दों के तृतीया विभक्ति एकवचन व सप्तमी विभक्ति के एकवचन के रूप लिखो।
३. मत्या, वाचि, गवाम्, वध्वाम् शब्दों की विभक्ति तथा वचनों को लिखो।
४. क्ङिति, अदेङ्, संयोगः, ईदूदेद् द्विवचनम्, ईदूतौ शब्दों के रूप वेदादि शब्दों में से किन-किन के समान हैं?
५. हलः, अनन्तराः, घः, विभक्ति तथा वचन बताओ।

चतुर्थ प्रकरणम्

समास-प्रकरणम्

प्रश्न :- समास किसे कहते हैं?

उत्तर :-'समर्थः पदविधिः' (अ.२/१/१) सम्बन्धित, विभक्ति रहित पदों के मेल को समास कहते हैं। अर्थात् संक्षेप को समास कहते हैं।

उदाहरण :- देवदत्तस्य भृत्यः (देवदत्त का नौकर) यहां 'देवदत्तस्य' शब्द षष्ठी विभक्ति एकवचन तथा 'भृत्यः' प्रथमा विभक्त एकवचन है। समास होने पर विभक्ति रहित होकर 'देवदत्तभृत्यः' ऐसा एक शब्द बन जाता है।

प्रश्न :- समर्थ अर्थात् सम्बन्धित का क्या अभिप्राय है?

उत्तर :-परस्पर सम्बन्ध वाले शब्दों का ही समास होता है; सम्बन्ध रहितों का नहीं। जैसे- यज्ञदत्तः देवदत्तस्य, भृत्यः रामस्य। इस वाक्य में देवदत्त का सम्बन्ध यज्ञदत्त के साथ है तथा भृत्य का रामस्य के साथ। अतः 'देवदत्तस्य' और 'भृत्यः' शब्दों का परस्पर सम्बन्ध न होने से समास नहीं होता है।

प्रश्न :- समास होने पर शब्द का क्या नाम होता है?

उत्तर :-समस्त पद। जैसे 'देवदत्तभृत्यः' यह समस्तपद कहलाता है।

प्रश्न :- क्या संस्कृत भाषा में समस्तपदों का ही प्रयोग किया जाता है अथवा समास रहितों का भी?

उत्तर :-दोनों प्रकार के पदों का प्रयोग होता है। जैसे- देवदत्तस्य भृत्यः, इसका भी प्रयोग होता है और 'देवदत्तभृत्यः' इसका भी।

प्रश्न :- समास रहित पदों की अवस्था का क्या नाम है?

उत्तर :-विग्रह-अवस्था।

प्रश्न :- समस्तपद में पूर्वापर शब्दों को किस नाम से जानते हैं?

उत्तर :-समस्तपद में पूर्व शब्द को पूर्वपद तथा उत्तर शब्द को उत्तरपद कहते हैं। जैसे- राज्ञः पुरुषः = राजपुरूषः। यहां 'राजपुरुषः' समस्तपद में राज (राजन्) पूर्वपद और पुरुषः उत्तरपद है। इसी प्रकार 'राज्ञः पुरुष' इस विग्रह अवस्था में भी 'राज्ञः' को पूर्वपद तथा 'पुरुष' को उत्तरपद कहते हैं।

प्रश्न :- समास कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर :-मुख्यातया चार प्रकार के।

प्रश्न :- कौन-कौन से?

उत्तर :-१. अव्ययीभावः, २. तत्पुरुषः, ३. बहुव्रीहिः, ४. द्वन्द्वः।

(१) अव्ययीभाव समास

प्रश्न :- अव्ययीभावः समास किसे कहते हैं?

उत्तर :-जिसमें पूर्वपद अव्यय हो तथा उसकी प्रधानता हो उसी समास को अव्ययीभाव समास कहते हैं। यह समास नपुंसकलिङ्ग एकवचन में होता है। उदाहरण- अग्नेः समीपम् = उप + अग्निः = उपाग्निः।

प्रत्यग्निः, उपकुम्भम्, प्रतिदिनम्, इत्यादि।

(२) तत्पुरुष समास

प्रश्न :- तत्पुरुष समास किसे कहते हैं?

उत्तर :-उत्तरपदार्थप्रधानः तत्पुरुषः जिस समास में उत्तरपद के अर्थ की प्रधानता होती है, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। तत्पुरुष समास में लिङ्ग उत्तरपद के लिङ्गानुसार होता है, अर्थात् यदि उत्तरपद पुलिङ्ग में है तो समस्त पद भी पुलिङ्ग में होगा। यदि उत्तरपद नपुसकलिङ्ग व स्त्रीलिङ्ग में हो तो समस्तपद भी नपुसंक तथा स्त्रीलिंग में होगा। उदाहरण- राज्ञः पुरुषः = राजपुरुषः।

'राजपुरुष को लाओ' ऐसा कहने पर राजा से सम्बन्धित किसी पुरुष को लाया जाता है, राजा को नहीं। अतः पुरुष शब्द जो उत्तरपद में है, उसकी प्रधानता हुई। ऐसे समास को तत्पुरुष समास कहा जाता हैं।

तत्पुरुष समास के मुख्य दस भेद होते हैं।

(१) कर्मधारय तत्पुरुष
(२) द्विगु तत्पुरुष
(३) द्वितीया तत्पुरुष
(४) तृतीया तत्पुरुष
(५) चतुर्थी तत्पुरुष
(६) पंचमी तत्पुरुष
(७) षष्ठी तत्पुरुष
(८) सप्तमी तत्पुरुष
(९) एकाधिकरण तत्पुरुष
(१०) नञ् तत्पुरुष

१) कर्मधारय तत्पुरुष समास

प्रश्न :- कर्मधारय समास किसे कहते हैं ?

उत्तर :- **'तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः'** (अ.१/२/४२) जिस तत्पुरुष समास में आने वाले सारे पद एक ही वस्तु को कहें उसे कर्मधारय समास कहते हैं। जैसे- कृष्णसर्पः = काला साँप। यहां 'कृष्णः' और 'सर्पः' दोनों पद एक ही द्रव्य (सर्प) को कहते हैं। इस समास में दोनों पद विग्रह अवस्था में प्रथमा विभक्ति में होते हैं।

२) द्विगु समास

प्रश्न :- द्विगु समास किसे कहते हैं ?

उत्तर :- **संख्यापूर्वो द्विगुः** (अ.२/२/५१) जिसका पूर्वपद संख्यावाचक हो उसे द्विगु तत्पुरुष समास कहा जाता है। जैसे- पञ्चपूली (पांच पूलियों का समूह) तथैव दशपूली, पञ्चकपालः, पञ्चराजम् इत्यादि। यहां सर्वत्र पूर्वपद में स्थित 'पञ्च' तथा 'दश' शब्द संख्या को कहने वाले हैं।

३) द्वितीया तत्पुरुष समास

जिसका पूर्वपद द्वितीया विभक्ति में ही हो वह द्वितीया तत्पुरुष समास कहलाता है।

जैसे- सुखं प्राप्तः = सुखप्राप्तः (सुख को प्राप्त) दुःखं प्राप्तः = दुःखप्राप्तः (दुःख को प्राप्त)

यहां सुखं दुःखं ये दोनो पूर्वपदस्थ शब्द द्वितीया विभक्ति में हैं।

४) तृतीया तत्पुरुष समास

जिस समास का पूर्वपद तृतीया विभक्ति से युक्त हो वह तृतीया तत्पुरुष समास कहते हैं। जैसे-

वाचा कलहः = वाक्कलहः (वाणियों के द्वारा कलह)
अहिना हतः = अहिहतः (साँप के द्वारा मारा हुआ)
दण्डेन ताडितः = दण्डताडितः (लाठी के द्वारा ताडित)

यहां वाचा, अहिना, दण्डेन ये तीनों पूर्वपद तृतीया विभक्त्यन्तं हैं।

५) चतुर्थी तत्पुरुष समास

जिसका पूर्वपद चतुर्थी विभक्ति में हो वह चतुर्थी तत्पुरुष समास है। जैसे- यूपाय दारु = यूपदारु (खम्बे के लिए लकड़ी)
देवाय हविः = देवहविः (देव के लिए हवि)
यज्ञाय घृतम् = यज्ञघृतम् (यज्ञ के लिए घी)

उपर्युक्त तीनों समस्तशब्दों में पूर्वपद चतुर्थी विभक्ति से युक्त है।

६) पञ्चमी तत्पुरुष समास

जिस समास का पूर्वपद पञ्चमी विभक्ति में हो, उसे पञ्चमी तत्पुरुष समास कहते हैं। जैसे-

वृकात् भयम् = वृकभयम् (भेड़िये से भय)
मृत्योः भयम् = मृत्युभयम् (मृत्यु से भय)

यहां वृकात्, मृत्योः ये दोनों पद पञ्चम्यन्त हैं।

७) षष्ठी तत्पुरुष समास

जिस समास का पूर्वपद षष्ठी विभक्ति में हो उसको षष्ठी तत्पुरुष समास कहा जाता है। जैसे-

रामस्य सेवकः = रामसेवकः (राम का सेवक)
राज्ञः पुरुषः = राजपुरुषः (राजा का आदमी)
लतायाः पत्रम् = लतापत्रम् (बेल का पत्ता)

यहां रामस्य, राज्ञः, लतायाः, ये तीनों पूर्वपद षष्ठ्यन्त हैं।

८) सप्तमी तत्पुरुष समास

जिस समास में पूर्वपद सप्तमी विभक्ति से युक्त हो उसे सप्तमी

तत्पुरुष कहते है। जैसे-

अक्षेषु धूर्तः = अक्षधूर्तः (पाशों में धूर्त)

ग्रामे सिद्धः = ग्रामसिद्धः (ग्राम में बना)

यहां अक्षेषु, ग्रामे ये पूर्वपद सप्तमी विभक्ति में हैं।

९) एकाधिकरण समास

जो तत्पुरुष समास किसी वस्तु के एकदेशस्थ अवयव आदि को प्रकट करे उसे एकाधिकरण समास कहते हैं।

जैसे- पूर्व कायस्य = पूर्वकायम्। अर्ध पिप्पल्याः = अर्धपिप्पलि।

१०) नञ् तत्पुरुष समास

जिस समास का पूर्वपद 'न' ऐसा अव्यय शब्द हो वह नञ् तत्पुरुष समास कहलाता है। जैसे-

न पुरुषः = अपुरुषः (पुरुष नहीं)

न पठितः = अपठितः (अनपढ़)

न आस्तिकः = नास्तिकः (ईश्वर को न मानने वाला)

यहाँ सर्वत्र 'न' पूर्वपद में है। इसके साथ ही तत्पुरुष के दश भेद समाप्त हो जाते हैं।

(३) बहुव्रीहि समास

अनेकमन्यपदार्थे (२/२/२४) अनेक पदों का वह समास; जो समास में आने वाले पदों से भिन्न पद के अर्थ को व्यक्त करे, उसे बहुव्रीहि कहते है। जैसेः- चित्रा गावो यस्य सः = चित्रगुः (चितकबरी हैं गाय जिसकी) यहां समस्तपद 'चित्रगुः' में 'चित्र' और 'गो' शब्द अपने से भिन्न वस्तु का अर्थ प्रकट करते हैं। दोनो से भिन्न मनुष्य को प्रकट किया है।

इस समास की विग्रह अवस्था प्रकट करने के लिए 'येन' 'यस्य' 'अनेन' 'अस्य' इत्यादि शब्दों का प्रयोग होता है। जैसे- चित्रा गावो यस्य।

(४) द्वन्द्व समास

प्रश्न :- द्वन्द्व समास किसे कहते हैं?

उत्तर :- चार्थे द्वन्द्वः (२/२/२९) जिस समास में च (और) का अर्थ

हो वह द्वन्द्व समास कहाता है।

जैसे- रामश्च लक्ष्मणश्च = रामलक्ष्मरणौ (राम और लक्ष्मण)

प्रश्न :- द्वन्द्व के कितने भेद हैं?

उत्तर :- दो भेद हैं। १. इतरेतरद्वन्द्व २. समाहारद्वन्द्व।

प्रश्न :- इतरेतरद्वन्द्व समास की क्या पहचान है?

उत्तर :- (क) इतरेतरद्वन्द्व समास हमेशा द्विवचन अथवा बहुवचन में होता है। (ख) इतरेतरद्वन्द्व समास में भी तत्पुरुष के समान उत्तरपद के लिङ्गानुसार समस्तपद का लिङ्ग होता है।

जैसे- देवदत्तश्च मोहनश्च = देवदत्तमोहनौ।

देवदत्तमोहनश्च सोहनश्चेति = देवदत्तमोहनसोहनाः।

प्रश्न :- समाहार द्वन्द्व की क्या पहचान है?

उत्तर :- समाहारद्वन्द्व समास नपुंसकलिङ्ग एकवचन में होता है।

जैसे :- हस्तौ च पादौ चेति = हस्तपादम्।

उपरिलिखित समासों को अच्छी प्रकार स्मरण करें। इन्हीं आधार पर सूत्रों में समास छांटना सरल हो जायेगा।

अभ्यास

१. समास किसे कहते है बताओ?

२. तत्पुरुष समास के सभी भेदों को उदाहरण सहित लिखो।

३. दुःखप्राप्तः, उपाग्नि, वृकभयम्, चित्रगुः, हस्तपादम्, शब्दों में कौन-कौन से समास हैं?

४. इतरेतरद्वन्द्व की क्या पहचान है?

सूत्रों में समास की पहचान एवं विग्रह

सूत्र १. वृद्धिरादैच्।

विग्रह :- आच्च ऐच्चेति = आदैच् (आ और ऐच) समाहार द्वन्द्व। यहां च के अर्थ में एकवचन नपुंसकलिङ्ग होने से समास का नाम समाहार द्वन्द्व है।

सूत्र २. अदेङ्गुणः।

विग्रह :- अच्च एङ् च = अदेङ् (अ और एङ्)

यहां भी च के अर्थ में समास तथा नपुंसकलिङ्ग एकवचन होने से समाहार द्वन्द्व समास जानना चाहिए।

सूत्र ३. इको गुणवृद्धी।

विग्रह :– गुणश्च वृद्धिश्च = गुणवृद्धी (गुण और वृद्धि) इतरेतर द्वन्द्व। च का अर्थ होने से तथा द्विवचन होने से इतरेतर द्वन्द्व समास हुआ।

सूत्र ४. न धातुलोप आर्धधातुके।

समास :– धातोः अवयवः = धातु-अवयवः (षष्ठी तत्पुरुष समास) धातु-अवयवस्य लोपो यस्मिन् तत् = धातुलोपम्, तस्मिन् ध ातुलोपे (उत्तरपदलोपी बहुव्रीहि समास)

संकेत :– तस्मिन् का ग्रहण सप्तमी विभक्ति के निर्देश के लिए है।

सम्पूर्ण समास :– (षष्ठी तत्पुरुष गर्भित बहुव्रीहि समास)

प्रश्न :– उत्तरपदलोपी क्या है ?

उत्तर :– उपरि प्रदर्शित बहुव्रीहि समास में 'धातु-अवयव+लोप' ये दो पद हैं पूर्वपद 'धातु-अवयव' समस्त पद है, जिसमे पूर्वपद 'धातु' है तथा उत्तरपद 'अवयव' है; सो यहां बहुव्रीहि समास करने पर पूर्वपद (धातु अवयव) के उत्तरपद (अवयव) का लोप होकर 'धातुलोप' रह गया। इसे उत्तरपदलोपी समास कहते हैं।

प्रश्न :– गर्भित का क्या अभिप्राय है ?

उत्तर :– गर्भित का अर्थ मध्य में होता है। समस्तपद में अन्तिम समास से पूर्व आनेवाले समास मध्य में आनेवाले अथवा गर्भित कहलाते हैं। अतः धातुलोपे शब्द में अन्तिम समास बहुव्रीहि से पूर्व होने वाला षष्ठी तत्पुरुष समास गर्भित कहलाता है।

सूत्र ५. क्ङिति च।

समास :– गश्च कश्च ङश्च = क्क्ङः (इतरेतरद्वन्द्व समास)

खरि च (८/४/५४) सूत्र से ग् को क् हुआ।

च का अर्थ होने एवं बहुवचन होने से इतरेतरद्वन्द्व समास हुआ।

इच्च इच्च इच्च = इतः (एकशेष)

क्क्ङः इतः यस्य स क्क्ङित् (अन्यपदार्थप्रधान होने से बहुव्रीहि) तस्मिन् क्क्ङिति।

सम्पूर्ण समास का नाम :– इतरेतर द्वन्द्व गर्भित बहुव्रीहि समास।

प्रश्न :– इच्च क्या है ?

उत्तर :– इत् च-इच् च = इच्च।

त् को च् के सम्बन्ध से च् हो जाता है।

प्रश्न :– एकशेष का क्या प्रयोजन है ?

उत्तर :– सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ (१/२/६४) अर्थात् एकरूप वाले अनेक शब्दों का समान विभक्ति के परे रहते एकशेष रह जाता है। जैसे अनेक इत् (तीन) शब्दों का एकवचन परे रहते एक इत् शब्द शेष रहकर तीन शब्दों का एकशेष रहने से बहुवचन में लिखा जाता है। ऐसे ही अन्यत्र भी समझें। जैसे-वृक्षश्च वृक्षश्च वृक्षश्च = वृक्षाः (एकरूप एकशेष बहुवचन)

सूत्र ६. दीधीवेवीटाम्।

समास :– दीधी च वेवी च इट् च = दीधीवेवीटः (इतरेतरद्वन्द्व) तेषां = दीधीवेवीटाम् (षष्ठीबहुवचन में)

यहां च का अर्थ होने से द्वन्द्व तथा बहुवचन में होने से इतरेतरद्वन्द्व समास।

सूत्र ७. हलोऽनन्तराः संयोगः।

समास :– हल् च हल् च हल् च = हलः (सरूप एकशेष बहुवचन का वाच् की तरह एक बहुवचन रूप बन गया)।

हल् च हल् च = हलौ (दो सरूप होने से एकशेष द्विवचन का रूप हुआ)। हलश्च हलौ च = हलः (सरूप एकशेष अनेक होने से बहुवचन)। अनन्तराः – न विद्यते अन्तरं येषां ते = अनन्तराः {जिन (हलों) में अच् का अन्तर (व्यवधान) नहीं। अन्यपदार्थ प्रधान होने से बहुव्रीहि समास}।

सूत्र ५. मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः।

समास :– मुखनासिकावचनः – मुखञ्च नासिका च = मुखनासिकम्।

यहां ''मुखञ्च''में चकार के योग से 'म्' को 'ञ्' से हो गया तथा चार्थ होने से द्वन्द्व तथा नपुंसकलिङ्ग होने से समाहारद्वन्द्व हुआ।

मुखनासिकम् आवचनं यस्य सः = मुखनासिकावचनः (अन्यपदार्थ होने से बहुव्रीहि समास बना)।

सम्पूर्णसमास :- द्वन्द्वगर्भित बहुव्रीहि।

सूत्र ९. तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्।

समास :-आस्ये प्रयत्नः = आस्यप्रयत्नः (पूर्वपद में सप्तमी विभक्ति होने से सप्तमी तत्पुरुषसमास)।

तुल्य आस्यप्रयत्नो यस्य तत् = तुल्यास्यप्रयत्नम् (अन्यपदार्थ-प्रधानत्वात् बहुव्रीहिसमासः)

सम्पूर्णसमास :- सप्तमी तत्पुरुषगर्भित बहुव्रीहि।

सूत्र १०. नाज्झलौ।

अच्च हल् च = अज्झलौ (च और ह की सन्धि होने से ज्झ हो गया) यहां भी च का अर्थ एवं द्विवचन होने से इतरेतरद्वन्द्व समास हुआ।

इसी प्रकार आगे भी सूत्रों में समास का प्रयोग जान लें।

पञ्चमप्रकरणम्

अर्थ प्रकरणम्

सूत्रार्थ करने के लिए निम्न संकेतों का ध्यान रखें।

१- सूत्रार्थ करने के पूर्व पदच्छेद, विभक्ति, अनुवृत्ति और समास के सम्बन्ध में विचार करें।

२- यदि सूत्र के सभी पद प्रथमा विभक्ति में हों तो प्रायः संज्ञा-संज्ञी व विशेष्य-विशेषण अर्थ होता है।

३- पञ्चमी विभक्ति का अर्थ अधिकतर 'से, परे' करना चाहिए।

४- षष्ठी विभक्ति का अर्थ अधिकतर स्थान में (पर) ऐसा जानें।

५- सप्तमी का अर्थ 'परे रहने पर' बहुधा विचारें।

उपरिलिखित नियमों का सूत्रों में प्रयोगः-

(१) पञ्चमी विभक्ति का उदाहरण

सूत्र :- **गुप्तिज्किद्भ्यः सन्** (३/१/५)

अनुवृत्ति :- प्रत्ययः परश्च।

पदच्छेदः, विभक्तिः - गुप्तिज्किद्भ्यः ५/३, सन् १/१।

समासः - गुप् च तिज् च कित् च = गुप्तिज्कितः, तेभ्यः - गुप्तिज्किद्भ्यः इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

अर्थ :- गुपतिज्किद्भ्यो धातुभ्यः परः सन् प्रत्ययो भवति।

आर्यभाषा :- गुपादि धातुओ से परे सन् प्रत्यय होता है।

सूत्र में पञ्चमी विभक्ति होने के कारण परे अर्थ हुआ।

गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित् (१/२/१) से **रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च** (१/२/२६) **अनुदात्तङित आत्मनेपदम्** (१/३/१२) से **लुटि च क्लृपः** (१/३/९३) तक।

तृतीयाध्याय, चतुर्थाध्याय, पञ्चमाध्याय तथा अन्यत्र जहां पञ्चमी दिखाई दे वहां 'से, परे' अर्थ करना चाहिए।

(२) षष्ठी विभक्ति का उदाहरण-

सूत्र :- **अस्तेर्भूः** (२/४/५२)।

अनुवृत्ति :- आर्धधातुके।

पदच्छेद, विभक्ति :– अस्तेः ६/१, भूः १/१।
समास :– नहीं।
अर्थ :– अस्तेः स्थाने भूरादेशो भवति आर्धधातुकविषये।
आर्यभाषा :– अस् धातु के स्थान में (पर) भू आदेश होता है, आर्धधातुक के विषय में।

सूत्र में षष्ठी विभक्ति होने के कारण स्थान में (पर) अर्थ हुआ। **ब्रुवो वचिः** (२/४/५३), **चक्षिङः ख्याञ्** (२/४/५४) इत्यादि अनेक सूत्रों के अर्थ इस प्रकार किये जा सकते हैं।

(३) सप्तमी विभक्ति का उदाहरण–
सूत्र :– लुङि च (२/४/४३)।
अनुवृत्ति :– आर्धधातुके, हनो, वध।
पदच्छेद, विभक्ति :– लुङि ७/१, च (अ.प.)
समास :– नहीं।
अर्थ :– हनः स्थाने 'वध' आदेशो भवति आर्धधातुके लुङि परतः।
आर्यभाषा :– लुङ् आर्धधातुक परे रहते हन् के स्थान पर 'वध' आदेश होता है।

सूत्र में सप्तमी विभक्ति होने से 'परे रहने पर' अर्थ हुआ। **सनि च** (२/४/४७), **गाङ् लिटि** (२/४/४९), इत्यादि सूत्रों में सप्तमी विभक्ति होने से 'परे रहने पर' अर्थ जानना चाहिए।

प्रथमा विभक्ति के उदाहरण संज्ञा विषय में देखें।

इस प्रकार अभ्यास करने से विद्यार्थी स्वयं पर्याप्त सूत्रों के अर्थ करने से समर्थ होगा।

इससे आगे संज्ञा ज्ञान के विषय में उपरिलिखित नियम दर्शाए जायेंगे।

संज्ञा ज्ञान विषय

लौकिक व्यवहार की भांति व्याकरण में भी सर्वप्रथम संज्ञा का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। परमकारुणिक आचार्य ने इसीलिए प्रथमाध्याय के प्रथमपाद में संज्ञाओ का उल्लेख किया है। अत एव प्रथमपाद का नाम संज्ञापाद है।

१. वृद्धि संज्ञा

प्रश्न :– वृद्धि किसे कहते हैं?
उत्तर :– **"वृद्धिरादैच्"** (१/१/१) पदच्छेद विभक्ति तथा समास पूर्ववत्।
अर्थ :– आदैच् (संज्ञी) वृद्धिः (संज्ञा) अध्याहारः।
व्याख्या :– आदैचां वृद्धिः संज्ञा भवति।
आर्यभाषा :– आ ऐ औ का नाम वृद्धि होता है।

सूत्र के पद प्रथमाविभक्ति में होने से सूत्र का अर्थ संज्ञा संज्ञी में हुआ।

प्रश्न :– अध्याहार किसे कहते हैं?
उत्तर :– अर्थ करते समय सूत्र के शब्द क्रमशः (अन्वय सहित) रखकर पश्चात् भवति, अस्ति, भवेत्, स्यात्, भवतु, भवेयुः, स्युः इत्यादि में से किसी एक को लगाया जाता है। इसे अध्याहार कहते हैं।
(सूत्रार्थ का यह विधान सर्वत्र स्मरण रखें)
प्रश्न :– आदैच् का अर्थ आ, ऐ, औ कैसे लिया?
उत्तर :– आत् = आ, ऐच (प्रत्याहार) = ऐ औ।
प्रश्न :– संज्ञी किसे कहते हैं?
उत्तर :– जिसका नाम हो उसे संज्ञी कहते हैं। जैसे 'आदैच्' का नाम 'वृद्धि' है। अतः आदैच् संज्ञी कहलाता है।
प्रश्न :– सूत्र में (आने वाले) पूर्वपद को संज्ञा जानें या संज्ञी?
उत्तर :– सूत्र में पूर्व शब्द को संज्ञी जानें।
प्रश्न :– 'वृद्धिरादैच्' सूत्र में पहले संज्ञापद (वृद्धि) को क्यों लिखा?
उत्तर :– मांगलिक आचार्य ने मंगलार्थ अर्थात् पढ़ने वालों की सर्वत्र वृद्धि हो, समुन्नति हो, इसीलिए वृद्धि शब्द को पहले रखा है। अन्यत्र सब सूत्रों में पूर्वपद को संज्ञी समझें।

२. गुण संज्ञा

प्रश्न :– गुण किसे कहते हैं?
उत्तर :– अदेङ्गुणः (१/१/२) पदच्छेद विभक्ति समास पूर्ववत्।

अर्थ :- अदेङ् (संज्ञी) गुणो (संज्ञा) भवति (अध्याहारः) अ, ए, ओ का नाम गुण होता है।

सूत्र के पद प्रथमा विभक्ति में है। अतः सूत्रार्थ संज्ञा संज्ञी में हुआ। पूर्वपद 'अदेङ्' संज्ञी तथा उत्तरपद 'गुणः' संज्ञा है। जैसा कि अर्थ में दर्शाया है। इसी प्रकार सर्वत्र संज्ञा प्रकरण में जानें।

प्रश्न :- अदेङ् से अ ए ओ का कैसे ग्रहण हुआ?

उत्तर :- अत् = अ। एङ् (प्रत्याहार) = ए, ओ।

३. संयोग

प्रश्न :- संयोग किसे कहते हैं?

उत्तर :- हलोऽनन्तराः संयोगः (१/१/७) अनुवृत्ति- नहीं।
पदच्छेद-विभक्ति-समास पूर्ववत्।

अर्थ :- हलोऽनन्तराः (संज्ञी) संयोगः (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- अज्व्यवधानरहितानां द्वयोश्च बहूनां हलां संयोग संज्ञा भवति। यथा कुण्डा में ण् ड् का संयोग है।

शब्दार्थ :- अनन्तराः = व्यवधान रहित।

आर्यभाषा :- अच् के व्यवधान से रहित दो या बहुत हलों की संयोग संज्ञा होती है।

प्रश्न :- अच् का ग्रहण कैसे हुआ?

उत्तर :- वर्ण दो प्रकार के होते हैं, अच् और हल्। व्यवधान भिन्न जाति के द्वारा होता है। अतः अच् का ग्रहण है।

प्रश्न :- अज्व्यवधानरहितानां को अच् व्यवधानरहितानां समझना चाहिए?

उत्तर :- सन्धि के नियम से च् को ज् हो जाता है, अतः अज्व्यवधानरहितानां हुआ। (सन्धिनियमों का प्रौढ़ ज्ञान पाणिनीय व्याकरण से ही पूर्ण होगा)

४. अनुनासिक

सूत्र :- **मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः** (१/१/८) **अनुवृत्ति** :- नहीं
पदच्छेद- विभक्ति समास पूर्ववत्।

अर्थ :- मुखनासिकावचनः (संज्ञी) अनुनासिकः(संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- किञ्चित् मुखेन किञ्चित् नासिकया यो वर्ण उच्चार्यते तस्य अनुनासिकसंज्ञा भवति (अध्याहारः)।

आर्यभाषा :- जो वर्ण कुछ मुख के द्वारा एवं कुछ नासिका के द्वारा बोला जाता है उसे अनुनासिक कहते हैं।

प्रश्न :- कुछ तथा बोला जाना किन शब्दों के अर्थ हैं।

उत्तर :- आ = कुछ। वचनम् = बोला जाना।

प्रश्न :- वर्ण अर्थ कैसे लिया?

उत्तर :- बहुव्रीहि समास (अन्यपदार्थ) होने से ।

५. सवर्णम्

सूत्र :- **तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्** (१/१/९) अनुवृत्ति :- नहीं।
पदच्छेद-विभक्ति-समास पूर्ववत्।

अर्थ :- तुल्याप्रयत्नं (संज्ञी) सवर्णम् (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- येषां वर्णानां आस्ये तुल्यस्थानं प्रयत्नश्च भवति तेषां परस्परं सवर्णसंज्ञा भवति।

आर्यभाषा :- जिन वर्णों के मुख में स्थान एवं प्रयत्न तुल्य होते हैं उनकी परस्पर सवर्ण संज्ञा होती है। जैसे :- अ और आ का समान स्थान व प्रयत्न होने से इनकी परस्पर सवर्ण संज्ञा है।

प्रश्न :- तुल्य तथा आस्यम् का क्या अर्थ है?

उत्तर :- तुल्य का अर्थ है समान, आस्यम् का अर्थ है मुख में होने वाला स्थान और प्रयत्न।

६. प्रगृह्यम्

सूत्र :- **ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्** (१/१/११) **अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदच्छेद-विभक्ति :- ईदूदेत् १/१, द्विवचनम् १/१, प्रगृह्यम् १/१।

समास :- ईच्च ऊच्च एच्च = ईदूदेत् (समाहार द्वन्द्व समास)।

अर्थ :- ईदूदेद् द्विवचनं (संज्ञी) प्रगृह्यम् (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- ईकारान्तम् ऊकारान्तम् एकारान्तम् द्विवचनम् शब्दरूपं प्रगृह्यसंज्ञकं भवति।

आर्यभाषा :- ईकारान्त ऊकारान्त एकारान्त द्विवचन शब्दरूप की प्रगृह्य संज्ञा होती है।

प्रश्न :- प्रगृह्य संज्ञा का क्या फल है?

उत्तर :- प्रकृति भाव होना।

प्रश्न :- प्रकृतिभाव क्या है?

उत्तर :- सन्धि न होना। जैसे- अग्नी अत्र। इस उदाहरण में ई और अ की सन्धि होने से 'इको यणचि' सूत्र से ई को य् प्राप्त है। पर ईकारान्त (अग्नी) द्विवचन होने से इस सूत्र से प्रगृह्य संज्ञा होती है। प्रगृह्य संज्ञा का फल सन्धि निषेध है। इसी प्रकार वायू इति। फले इति में भी प्रगृह्य संज्ञा होने से प्रकृतिभाव (सन्धि निषेध) समझना चाहिये।

आगे इस सूत्र से लेकर **ईदूतौ च सप्तम्यर्थे** (१/१/१८) तक के सूत्र प्रगृह्य संज्ञा करने वाले जानें।

७. घु

प्रश्न :- घु किसे कहते है?

उत्तर :- **दाधा घ्वदाप्** (१/१/१६) **अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदच्छेद विभक्ति :- दाधाः १/३ घु १/१ अदाप् १/१।

समास :- दाश्च धौ च = दाधाः (चार्थ एवं बहुवचन होने से इतरेतरद्वन्द्व समास)

न दाप् = अदाप् (पूर्वपद में नञ् होने से नञ् तत्पुरुष समास)

अर्थ :- अदाप् दाधाः (संज्ञा) घु (संज्ञा) अध्याहारः।

शब्दार्थ :- अदाप् = दाप् धातु को छोड़कर।

दाधाः = दा रूप वाली चार धातु व धा रूप वाली दो।

व्याख्या :- दारूपाः चत्वारो धातवो धारूपौ च द्वौ धातू दाप् दैपं वर्जयित्वा घुसंज्ञका भवन्ति।

आर्यभाषा :- दारूप वाली चार धातु व धारूप वाली दो धातु दाप् और दैप् को छोड़कर घु नामक होती हैं।

प्रश्न :- दारूप वाली चार धातुएं कौन कौन सी हैं?

उत्तर :- १. दा- डुदाञ् दाने, २. दा- दाण् दाने,
३. देङ् रक्षणे, ४. दो अवखण्डने।

प्रश्न :- धारूप वाली दो धातुएं कौन-कौन सी हैं?

उत्तर :- १. धा- डुधाञ् धारणपोषणयोः, २. धा- धेट् पाने।

प्रश्न :- सूत्र में अदाप् है पर अर्थ में दाप् दैप् को छोड़कर क्यों किया गया?

उत्तर :- दैप् का भी सूत्र से दाप् बन जाता है।

प्रश्न :- घु संज्ञा का क्या प्रयोजन है?

उत्तर :- आगे आने वाले सूत्रों में जैसे **"स्थाघ्वोरिच्च"** (१/२/२७) आदि में (स्था+घु+इत्+च) घु के ग्रहण से दा रूप व धारूप को लिया जायेगा।

८. घ

सूत्र :- **तरप्तमपौ घः। अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदच्छेद-विभक्ति :- तरप्तमपौ १/२ (वाच् के समान),
घः १/१ (देव के समान)।

समास :- तरप् च तमप् च = तरप्तमपौ (इतरेतर द्वन्द्व समास, चार्थ तथा द्विवचन होने से)।

अर्थ :- तरप्तमपौ (संज्ञी) घ (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- तरप्तमपौ प्रत्ययो घसंज्ञकौ भवतः।

आर्यभाषा :- तरप्तमप् प्रत्ययों का नाम घ होता है।

९. संख्या

सूत्र :- **बहुगणवतुडति संख्या** (१/१/२२)। **अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदच्छेद-विभक्ति :- बहुगणवतुडति १/१ (दधिवत्रूप),
संख्या १/१ (लतावत्)।

समास :- बहुश्च गणश्च वतुश्च डति च = बहुगणवतुडति।
(चार्थ एवं एकवचन होने से समाहार द्वन्द्व समास)

अर्थ :- बहुगणवतुडति (संज्ञी) संख्या (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- बहुगणशब्दौ वतुप्रत्ययान्ताः डतिप्रत्ययान्ताः च शब्दाः संख्या संज्ञका भवन्ति।

आर्यभाषा :- बहु और गण शब्द वतुप्रत्ययान्त तथा डतिप्रत्ययान्त शब्द संख्या संज्ञक होते हैं।

उदाहरण :-(१) बहु :- बहुकः बहुधा
(२) गण :- गणकः गणधा
(३) वतु :- तावत्कः तावद्धा
(४) डति :- कतिकः कतिधा

१०. षट्

सूत्र :- **ष्णान्ता षट्** (१/१/२३)। **अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदच्छेद :- विभक्ति- ष्णान्ता १/१ (लतावत्), षट् १/१ (वाच् के समान)।

समास :- षश्च नश्च = ष्णौ (चार्थ एवं द्विवचन होने से इतरेतर द्वन्द्व समास) ष्णौ अन्ते यस्याः सा = ष्णान्ता (अन्यपदार्थ होने से बहुव्रीहि)।

अर्थ :- ष्णान्ता (संज्ञी) षट् (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- षकारान्ता नकारान्ता च या संख्या सा षट्संज्ञिका भवति।

आर्यभाषा :- षकारान्त तथा नकारान्त जो संख्यावाची शब्द हैं, उनकी षट् संज्ञा होती है।

प्रश्न :- विग्रह में ष और न को अकारान्त क्यों लिखा है? जब कि समास में हलन्त है।

उत्तर :-उच्चारण के लिये।

११. निष्ठा

सूत्र :- क्तक्तवतू निष्ठा (१/१/२५) अनुवृत्ति :- नहीं।

पदच्छेद-विभक्ति :- क्तक्तवतू १/२ (साधु के समान),
निष्ठा १/१ (लता के समान)।

समास :- क्तश्च क्तवतुश्च = क्तक्तवतू (चार्थ एवं द्विवचन होने से इतरेतरद्वन्द्व समास)

अर्थ :- क्तक्तवतू (संज्ञी) निष्ठा (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- क्तक्तवतू प्रत्ययौ निष्ठासंज्ञकौ भवतः।

आर्यभाषा :- क्त और क्तवतु इन दो प्रत्ययों का नाम निष्ठा है।

१२. सर्वनाम

सूत्र :- सर्वादीनि सर्वनामानि (१/१/२६) **अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदच्छेद-विभक्ति :- सर्वादीनि १/३ (फलवत्),
सर्वनामानि १/३ (फलवत् रूप)।

समास :- सर्वः आदिर्येषां तानि = सर्वादीनि (अन्यपदार्थ होने से बहुव्रीहि)
सर्वेषां नामानि = सर्वनामानि (पूर्वपद षष्ठी विभक्ति में होने से षष्ठी तत्पुरुष समास)

अर्थ :- सर्वादीनि (संज्ञी) सर्वनामानि (संज्ञा) अध्याहारः।

शब्दार्थ :- सर्वादीनि = सर्वशब्द जिनके आदि में है ऐसे शब्दसमूह (गणपाठ में) सर्वनामानि- सब के वाचक।

व्याख्या :- सर्वादीनि शब्दरूपणि सर्वनामसंज्ञकानि भवन्ति।

आर्यभाषा :- सर्वादि शब्दों का नाम सर्वनाम होता है।
"सर्वादीनि सर्वनामानि" से लेकर **अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः** (१/१/३५) तक के सूत्र सर्वनाम संज्ञा करने वाले हैं।

प्रश्न :- सर्वनाम संज्ञा का क्या लाभ है?

उत्तर :- जिनका नाम सर्वनाम है उनके रूप देव के सदृश न होकर सर्व शब्द के समान होंगे।

प्रश्न :- देव तथा सर्व शब्द के रूपों में कहां-कहां भेद है?

उत्तर :-

विभक्ति वचन	देव	सर्व
१।३	देवाः	सर्वे
४।१	देवाय	सर्वस्मै
५।१	देवात्	सर्वस्मात्
६।३	देवानाम्	सर्वेषाम्
७।१	देवे	सर्वस्मिन्

१३. अव्यय

सूत्र :- **स्वरादिनिपातमव्ययम्** (१/१/३६)। **अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदविच्छेद-विभक्ति :- स्वरादिनिपातम् १/१, अव्ययम् १/१ (दोनो फलवत्)।

समास :– स्वर आदिर्येषां ते = स्वरादयः (अन्यपदार्थ होने से बहुव्रीहि) स्वरादयश्च निपाताश्च = स्वरादिनिपातम् (चार्थ एकवचन होने से समाहार द्वन्द्व)

सम्पूर्ण समास :– बहुव्रीहिगर्भित समाहार द्वन्द्व समास।

अर्थ :– स्वरादिनिपातम् (संज्ञी) अव्ययम् (संज्ञा)
स्वरादयः = स्वर् शब्द जिस शब्दसमूह (गणपाठ) के आदि में हो वे शब्द स्वरादयः कहलाते हैं।

निपाताः = **प्राग्रीश्वरान्निपाताः** (१/४/५६) सूत्र से लेकर **अधिरीश्वरे** (१/४/६५) तक आने वाले चादि शब्दो का नाम निपात हैं।

व्याख्या :– स्वरादयः शब्दाः निपातसंज्ञकाश्च अव्ययसंज्ञका भवन्ति।

आर्यभाषा :– स्वर् आदि शब्द तथा निपातसंज्ञक शब्दों का नाम अव्यय है।

विशेष :– "स्वरादिनिपातमव्ययम्" इस सूत्र से लेकर "अव्ययीभावश्च" (१/१/४०) सूत्र तक अव्यय बनाने वाले सूत्र हैं।

१४. सर्वनामस्थान

सूत्र :– **शि सर्वनामस्थानम्** (१/१/४१)। **अनुवृत्ति** :– नहीं।

पदविच्छेद-विभक्ति :– शि १/१ (दधिवत्) सर्वनामस्थानम् १/१ (फलवत्)।

समास :– नहीं।

अर्थ :– शि (संज्ञी) सर्वनामस्थानम् (संज्ञा) अध्याहारः।

शब्दार्थ :– शि, जस् और शस् इन दो प्रत्ययों के स्थान में (जश्शसोः शि) (७/१/२०) सूत्र से आने वाला आदेश।

व्याख्या :– शि इत्येतस्य सर्वनामस्थानसंज्ञा भवति।

आर्यभाषा :– जस् और शस् प्रत्ययों के स्थान पर आने वाले "शि" का नाम सर्वनामस्थान होता है।

सुडनपुंसकस्य (१/१/४२) सूत्र से भी सर्वनामस्थान संज्ञा होती है।

प्रश्न :– सुट् किसे कहते हैं?

उत्तर :– स्वौजसमौट्छष्टा ....सुप् (४/१/२) सूत्र से पूर्ववत् प्रत्याहार बनाने वाली विधि के अनुसार आदि वर्ण 'सु' के आगे 'औट्' के अन्तिम 'ट्' इत् वर्ण के साथ मिलकर सुट् प्रत्याहार बनाता है।

प्रश्न :– सुट् प्रत्याहार में कौन-कौन से प्रत्यय आते है?

उत्तर :– सु, ओ, जस्, अम्, औट् ये पांच प्रत्यय।

१५. विभाषा

सूत्र :– **न वेति विभाषा** (१/१/४३)। **अनुवृत्ति** :– नहीं।

पदच्छेद-विभक्ति :– न अ.प., वा अ.प., इति अ.प., विभाषा १/१।

समास :– नहीं।

अर्थ :– न वा इति (संज्ञी) विभाषा (संज्ञा) अध्याहारः।

शब्दार्थ :– न = निषेध, वा = विकल्प, इति = अर्थवाचक।

व्याख्या :– निषेधविकल्पार्थयोः विभाषा संज्ञा भवति।

आर्यभाषा :– निषेध और विकल्प के अर्थ का नाम विभाषा है।

विशेष :– घ आदि संज्ञाओ से कार्य प्राप्त होने पर उनके संज्ञी तरप्, तमप् आदि का ग्रहण होता है, परन्तु विभाषा कहने से न और वा का ग्रहण न होकर उनके अर्थ (निषेध विकल्प) का ज्ञान होता है।

१६. सम्प्रसारणम्

सूत्र :– **इग्यणः सम्प्रसारणम्** (१/१/४४) **अनुवृत्ति** :– नहीं।

पदविच्छेद-विभक्ति :– इक् १/१ यणः ६/१ (दोनो वाच् की तरह) सम्प्रसरणम् १/१ (फल की तरह रूप)। समास :– नहीं।

अर्थ :– यणः इक् (संज्ञी) सम्प्रसरणम् (संज्ञा) अध्याहारः।

शब्दार्थ :– यणः = यण् प्रत्याहार के स्थान पर। इक् = (इ उ ऋ लृ) इक् प्रत्याहार।

व्याख्या :– यणः स्थाने इक् वर्णस्य तथा विधानस्य सम्प्रसारणसंज्ञा भवति।

आर्यभाषा :– यण् के स्थान में आनेवाले इक् वर्ण का तथा विधान (यण् के स्थान में इक् करना) का नाम सम्प्रसारण है।

प्रश्न :– सूत्र में सभी पद प्रथमा विभक्ति में नहीं है क्योंकि यणः ६/१ है फिर संज्ञा संज्ञी में अर्थ कैसे हुआ?

उत्तर :– यणः अर्थात् यण के स्थान पर (इक्) संज्ञी, यणः के द्वारा प्रथमा

विभक्ति वाले संज्ञी (इक्) को ही निर्दिष्ट करता है।

१७. लोपः

सूत्र :- **अदर्शनं लोपः** (१/१/५६)। **अनुवृत्ति** :- इति।

पदविच्छेद-विभक्ति :- अदर्शनम् १/१ (फलवत्), लोपः १/१ (देववत्)।

समास :- नहीं।

अर्थ :- अदर्शनम् -इति। (संज्ञी) लोपः (संज्ञा) अध्याहारः।

शब्दार्थ :- अदर्शनम् = न दिखाई देना, यहां अदर्शन शब्दरूप नहीं लिया जायेगा अपितु अर्थ का ही ग्रहण होगा (न दिखाई देना, पूर्व 'न वेति विभाषा' सूत्र में आए न वा की तरह)

व्याख्या :- अदर्शनार्थस्य लोपसंज्ञा भवति।

आर्यभाषा :- दिखाई न देने का नाम लोप है।

विशेष :- इस सूत्र में इति शब्द अर्थ का बोधक है।

१८. लुक्, १९. श्लु, २०. लुप्

सूत्र :- **प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः** (१/१/६०)।

अनुवृत्ति :- अदर्शनम्, इति।

पदविच्छेद-विभक्ति :- प्रत्ययस्य ६/१ वेदवत्। लुक्श्लुलुपः १/३ (वाचूवत)

अर्थ :- प्रत्ययस्य अदर्शनम् इति (संज्ञी) लुक्श्लुलुपः (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- प्रत्ययस्य अदर्शनस्य (अर्थस्य) लुक्श्लुलुपः संज्ञा भवति।

आर्यभाषा :- प्रत्यय के अदर्शन की लुक्, श्लु, लुप् ये संज्ञाएं होती हैं। लुकादि कहकर प्रत्यय का अदर्शन होने पर लुक्, श्लु, लुप् समझें।

२१. टि

सूत्र :- **अचोऽन्त्यादि टि** (१/१/६३)। **अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदविच्छेद-विभक्ति :- अचः ६/१ (वाचूवत्) अन्त्यादि १/१ (दधिवत्) टि १/१ (दधिवत्)

समास :- अन्त्य आदिर्यस्य तद् = अन्त्यादि (अन्यपदार्थत्वात् बहुव्रीहि)

अर्थ :- अचः अन्त्यादि (संज्ञी) टी (संज्ञा) अध्याहारः।

व्याख्या :- शब्दस्य अचां (अचां मध्ये) यः अन्तिमोऽच् तस्य तथा

तदादिशब्दरूपस्य टि संज्ञा भवति।

आर्यभाषा :- शब्द के अचों में जो अन्तिम अच्, उसकी तथा वह अच् यदि किसी हल् के आदि में हो तो उस हल् सहित अच् की टि संज्ञा होती है।

जैसे- 'राम' यहां अन्तिम अच् 'अ' है। अतः अ का नाम टि होगा। इसी प्रकार 'सोमसुत्' इस शब्द में अन्तिम अच् 'त्' के आदि में है अतः 'उत्' की टि संज्ञा होगी।

२२. उपधा

सूत्र :- **अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा** (१/१/६४)। **अनुवृत्ति** :- नहीं।

पदविच्छेद-विभक्ति :- अलः ५/१ (वाचवत्), अन्त्यात् ५/१ (फलवत्), पूर्वः १/१ (देववत्), उपधा १/१ (लतावत्)।

समास :- नहीं।

अर्थ :- अन्त्यात् अलः पूर्वः (संज्ञी) उपधा (संज्ञा) अध्याहारः।

शब्दार्थ :- अन्त्यात् = अन्तिम् (अल्-वर्ण) से पूर्व।

अलः:- प्रत्याहार सूत्र 'अइउण्' के अ से लेकर 'हल्' के 'ल्' तक के सब वर्ण अल् प्रत्याहार से गृहीत होते है। अतः अलः का अर्थ अल् (वर्ण) से पूर्व।

व्याख्या :- शब्दस्य अन्त्यात् अलः (वर्णात्) पूर्वस्य अलः (वर्णस्य) उपधा संज्ञा भवति।

आर्यभाषा :- शब्द के अन्तिम वर्ण से पूर्व वर्ण की उपधा संज्ञा होती है। जैसे- 'भिद्' इस शब्द में अन्तिम वर्ण 'द्' से पूर्व 'इ' वर्ण का नाम उपधा है।

२३. वृद्ध

सूत्र :- **वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद् वृद्धम्** (१/१/७२)।

अनुवृत्ति :- नहीं।

पदविच्छेद-विभक्ति :- वृद्धिः १/१ मतिवत्, यस्य ६/१ सर्ववत्, अचाम् ६/३ वाचूवत्, आदिः १/१ हरिवत्, तत् १/१ सर्ववत् (नपुं.), वृद्धम् १/१ फलवत्।

समास :- नहीं।

अर्थ :– यस्याचामादिः वृद्धिस्तद् (संज्ञी) वृद्धम् (संज्ञा) अध्याहारः।

शब्दार्थ :– यस्य = जिस (शब्द) के, अचाम् = अचों के बीच में, आदिः = आदि अच्, वृद्धिः = वृद्धिसंज्ञक होता है = आ ऐ औ में से, तद् = वह (शब्द), वृद्धम् = वृद्ध कहलाता है।

व्याख्या :– यस्य शब्दस्य अचां मध्ये आदिः अच् वृद्धिसंज्ञको भवति स शब्दो वृद्धसंज्ञको भवति।

आर्यभाषा :– जिस शब्द का आदि अच् वृद्धि होता है उस शब्द की वृद्ध संज्ञा होती है। जैसे– 'ऐतिकायनः' इस शब्द में ऐ आदि अच् वृद्धि है, अतः ऐतिकायन शब्द वृद्ध कहलाता है।

।। इति प्रथमः पादः।।

आगे आर्यभाषा में अर्थ लिखा जायेगा जिससे शीघ्र सिद्धि में प्रवेश हो सके। उपरि अभ्यास के फलस्वरूप समझने में कठिनता न होगी।

२४. ह्रस्व, २५. दीर्घ, २६. प्लुत

सूत्र :– ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुतः। (१/२/२७)

अर्थ :– उ, ऊ, उ३ के काल के समान काल वाले अच् क्रमशः ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत नामक होते हैं। उ ऊ उ३ के काल के समान कालवाला– जैसे

	ह्रस्व	दीर्घ	प्लुत
अ (अच्) क्रमशः	अ	आ	अ ३
इ (अच्) क्रमशः	इ	ई	इ ३

इसी प्रकार सर्वत्र अचों में समझें।

ह्रस्व की एक मात्रा का परिमाण–जितने समय में अंगुष्ठ के मूल की नाड़ी एक बार धड़कती है, उतना समय माना जाता है। दीर्घ की द्विगुणी होने से दो मात्रा। प्लुत की त्रिगुणी होने से तीन मात्रा।

२७. उदात्त

सूत्र :– **उच्चैरुदातः** (१/२/२९)

अर्थ :– कण्ठादि वर्णोत्पत्ति स्थानों में से ऊर्ध्व भाग से बोला जाने

वाला अच् उदात्त कहलाता है।

विशेष :– ऊँची ध्वनि से चिल्लाकर बोलना उदात्त नहीं।

पहचान :– इसके बोलने में कण्ठ का संकोच, शरीर में कठोरता तथा स्वर में रूक्षता होती है। (महाभाष्य)

अ इ उ आदि अक्षरों में उदात्त का कोई चिह्न नहीं होता है।

२८. अनुदात्त

सूत्र :– **नीचैरनुदात्तः।** (१/२/३०)

अर्थ :– कण्ठादि वर्णोत्पति स्थानों में नीचे भाग से बोला जाने वाला अच् अनुदात्त कहलाता है।

विशेष :– नीचे ध्वनि से शनैः शनैः बोलना अनुदात्त नहीं।

पहचान :– इसके बोलने में कण्ठ का खुलना, शरीर में शिथिलता तथा स्वर में मृदुता होती है। (महाभाष्य)

स्वर् वर्ण के नीचे पड़ी रेखा से अनुदात्त को प्रगट किया जाता है। जैसे– अ॒। यहां अ के नीचे पड़ी रेखा (–) अनुदात्त स्वर का द्योतक है।

२९. स्वरित

सूत्र :– समाहारः स्वरितः। (१/२/३१)

अर्थ :– उदात्त और अनुदात्त का मेल जिस अच् में होता है वह स्वरित कहलाता है।

प्रश्न :– स्वरित में कितना भाग उदात्त व कितना अनुदात्त होता है?

उत्तर :– **'तस्यादित उदात्तमर्द्धह्रस्वम्'** (१/२/३२) = उस स्वरित के आदि की आधी मात्रा उदात्त, शेष अनुदात्त होता है।

जैसे :– अ स्वरित में आधी मात्रा उदात्त शेष आधी मात्रा अनुदात्त
आ स्वरित में आधी मात्रा उदात्त शेष डेढ़ मात्रा अनुदात्त
आ स्वरित में आधी मात्रा उदात्त शेष ढाई मात्रा अनुदात्त

इससे यह भी स्पष्ट हो गया कि स्वरित मे पहले उदात्त तथा पश्चात् अनुदात्त बोला जाता है।

नोट :– स्वरित का चिह्न वर्ण के ऊपर दिखाई देने वाली खड़ी रेखा है।

जैसे :- अ॑, इ॑, उ॑।

ह्रस्वादि एवं उदात्तादि के अनुसार अच् के विभाग

	ह्रस्व	**दीर्घ**	**प्लुत**
उदात्त	अ	आ	अ ३
अनुदात्त	अ॒	आ॒	अ॒ ३
स्वरित	अ॑	आ॑	अ॑ ३

इस प्रकार एक ह्रस्व अच् के ६ भेद हुए; आगे प्रत्येक को ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत भेद से विभाजित करने पर कुल मिलाकर १८ भेद हो जाते हैं।

	ह्रस्व		**दीर्घ**		**प्लुत**	
	सानुनासिक –	निरनुनासिक	सानु.	निर.	सानु.	निर
उदात्त :-	अँ	अ	आँ	आ	अँ३	अ३
अनुदात्त :-	अँ	अ	आँ	आ	अँ ३	अ ३
स्वरित :-	अँ	अ	आँ	आ	अँ ३	अ ३

इसी प्रकार अन्य अचों के भेद को भी समझें।

३०. अपृक्त

सूत्र :- **अपृक्त एकाल्प्रत्ययः** (१/२/४१)।

अर्थ :- एक अल् अर्थात् एक वर्ण वाले प्रत्यय को अपृक्त कहते हैं।

जैसे :- सु का 'स्'। क्विप् का 'व्'।

३१. उपसर्जन

सूत्र :- प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम् (१/२/४३)

अर्थ :- समास विधान करने वाले सूत्रों में जो प्रथमा विभक्ति वाला पद है, उसके द्वारा निर्दिष्ट (विग्रह में) पद उपसर्जन संज्ञक होता है।

जैसे :-	विग्रह	समास
	राज्ञः पुरुषः	राजपुरुषः

यहां प्रथमा विभक्त्यन्त 'षष्ठी' सूत्र से समास हुआ है अतः इसके द्वारा निर्दिष्ट 'राज्ञः' जो षष्ठ्यन्त है उसकी उपसर्जन संज्ञा हुई।

प्रश्न :- उपसर्जन संज्ञा का क्या प्रयोजन है?

उत्तर :- 'उपसर्जनं पूर्वम्' समास में जो उपसर्जन संज्ञक पद है वह इस सूत्र से पहले बैठता है।

जैसे :- उपर्युक्त राजपुरुषः में राज्ञः उपसर्जन होने से पहले।

विशेष :- अधिकतर आरम्भ में पढ़ने वाला छात्र राज्ञः पुरुषः का समास करते समय 'प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्' सूत्र द्वारा 'पुरुषः' इस प्रथमान्त पद को उपसर्जन संज्ञक समझ लेता है अतः खोलकर बताया गया है। ध्यान से पढ़ें।

३२. प्रातिपदिक

सूत्र :- **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्** (१/२/४५)।

अर्थ :- धातु और प्रत्यय को छोड़कर अर्थवान् शब्द का नाम प्रातिपदिक होता है। जैसे :- वन, धन इत्यादि।

प्रश्न :- धातु और प्रत्यय किनको कहते हैं?

उत्तर :- इन दोनों का उल्लेख, आगे ५८-५९ संख्या वाली संज्ञाओं पर किया है अतः वही पर देखें।

नोट :- अगले सूत्र 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से भी प्रातिपदिक संज्ञा होती है। इसका अर्थ सिद्धि प्रकरण में लिखा जायेगा।

३३. परस्मैपद

सूत्र :- लः परस्मैपदम् (१/४/९८)।

अर्थ :- लकार के स्थान पर आने वाले तिपादि प्रत्यय परस्मैपद संज्ञक होते हैं।

३४. आत्मनेपद

सूत्र :- तङानावात्मनेपदम् (१/४/९९)।

अर्थ :- तङ् और आन प्रत्ययों का नाम आत्मनेपद है।

विशेष :- यह सूत्र पूर्वसूत्र का अपवाद है, अतः तङ् और आन प्रत्यय लकार के स्थान पर आने वाले होते हुए भी आत्मनेपद संज्ञक होते हैं।

प्रश्न :- तङ् किसे कहते हैं?

उत्तर :- तङ् एक प्रत्याहार है, 'तिप्तस्झि......महिङ्' (३/४/७८)

सूत्र के अन्तिम ६ प्रत्यय इससे गृहीत होते हैं।

प्रश्न :- आन क्या है?

उत्तर :- शानच् और कानच् प्रत्ययों को यहां आन कहा है। इस प्रकार कुल आत्मनेपद संज्ञक प्रत्यय-

त	आताम्	झ	
थास्	आथाम्	ध्वम्	
इट्	वहि	महिङ्	
शानच्	कानच्		कुल ११

लकार के स्थान में आने वाले २२ प्रत्ययों में से उपर्युक्त ११ प्रत्ययों का नाम आत्मनेपद हो जाने पर शेष ११ परस्मैपद संज्ञक रह जाते हैं। इनको भी निम्न तालिका में देखें-

तिप्	तस्	झि	
सिप्	थस्	थ	
मिप्	वस्	मस् (९)	शतृ क्वसु २ = ११ प्रत्यय।

इसी प्रकार **"तौ सत्"** (३/२/१२७) = शतृ तथा शानच् प्रत्यय को सत् संज्ञक जानना चाहिए।

३५. नदी

सूत्र :- **यू स्त्र्याख्यौ नदी** (१/४/३)।

अर्थ :- स्त्रीलिङ्ग ईकारान्त तथा ऊकारान्त शब्दों का नाम नदी होता है।

जैसे-ईकारान्त-कुमारी, गौरी। ऊकारान्त-वधू।

नोट :- "यू स्त्र्याख्यौ नदी" सूत्र से लेकर "ङिति ह्रस्वश्च" तक के सूत्र नदी संज्ञा करने वाले हैं।

३६. घि

सूत्र :- **शेषो घ्यसखि** (१/४/७)

अर्थ :- शेष ह्रस्व इकारान्त और उकारान्त शब्द, जिनकी नदी संज्ञा न हो वे घि संज्ञक होते हैं सखि शब्द को छोड़कर।

जैसे :- इकारान्त-मुनि, हरि। उकारान्त-गुरु, साधु इत्यादि।

नोट- **'शेषो घ्यसखि'** से लेकर **'पतिः समास एव'** तक के सूत्र घि संज्ञा करने वाले हैं।

३७. लघु

सूत्र :- **ह्रस्वं लघु** (१/४/१०)।

अर्थ :- ह्रस्व अक्षर का नाम लघु होता है। जैसे- अ इ उ इत्यादि। ह्रस्व अक्षर लघु अक्षर कहाता है।

३८. गुरु

सूत्र :- **संयोगे गुरु** (१/४/११)।

अर्थ :- संयोग के परे रहते ह्रस्व अक्षर का नाम गुरु होता है। जैसे- कुण्डा, इस उदाहरण में 'ण्ड्' संयोग से परे रहते ह्रस्व 'उ' का नाम गुरु होता है। दीर्घं च (१/४/१२) सूत्र से दीर्घ का भी नाम गुरु होता है। जैसे- ई, ऊ, ॠ इत्यादि।

३९. अङ्ग

सूत्र :- **यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्यये ऽङ्गम्** (१/४/१३)

अर्थ :- जिस धातु या प्रातिपदिक से प्रत्यय का विधान किया जाता है उसी विहित प्रत्यय के परे रहते उससे पूर्व का नाम अङ्ग होता है।

जैसे :- भू धातु से पर क्त प्रत्यय विधान भू + क्त यहां क्त के परे रहते भू का नाम अङ्ग है।

४०. पद

सूत्र :- **सुप्तिङन्तं पदम्** (१/४/१४)

अर्थ :- सुप् और तिङ् अन्त वाले शब्दरूप की पदसंज्ञा होती है। जैसे- राम सु = रामः, हन् तिप् = हन्ति सम्पूर्ण शब्द पद संज्ञक।

सुप्तिङन्तं पदम् से लेकर **स्वादिष्वसर्वनामस्थाने** (१/४/१७) तक के सूत्र पदसंज्ञा करने वाले हैं।

४१. भ

सूत्र :- **यचि भम्** (१/४/१८)।

अर्थ :- **स्वौजसमौट्छष्टा...** (४/१/१) से लेकर **उरः प्रभृतिभ्यः कप्** (५/४/१५१) तक के सारे प्रत्यय हैं इनमें से यदि यकारादि अथवा अच् आदि प्रत्यय किसी शब्द से परे विहित

हों तो वह शब्द भंसज्ञक होता है। जैसे- गर्ग+यञ् स्वादि में यकारादि है, अतः गर्ग का नाम भ है।

नोट :- **'यचि भम्'** सूत्र से लेकर **अयस्मयादीनिच्छन्दसि** (१/४/२०) तक के सूत्र भ संज्ञा बनाने वाले हैं।

४२. कारक

क्रिया के निमित (आश्रय) को कारक कहते हैं। जैसे- रामः गच्छति। रामः कर्तृ कारक के बिना जाने की क्रिया नहीं हो सकती। इसी प्रकार 'सोहनः पठति' यहां सोहन कर्त्ता कारक है।

कारक के छह भेद

(१) अपादान, (२) सम्प्रदान,(३) करण, (४) अधिकरण, (५) कर्म, (६) कर्ता।

४३. अपादान कारक

सूत्र :- **ध्रुवमपायेऽपादाम्** (१/४/२४)।

अर्थ :- जिस स्थिर पदार्थ से किसी का पृथक होना पाया जाये उस स्थिर पदार्थ की अपादान संज्ञा होती है। जैसे- वृक्षात् पत्राणि पतन्ति। यहां वृक्ष से पत्तों का अलग होना अर्थ है अतः स्थिर वृक्ष की अपादान संज्ञा होगी।

'ध्रुवमपायेऽपादानम्' से लेकर **'भुवः प्रभवः'** (१/४/३१) तक के सूत्र अपादान संज्ञा करने वाले हैं।

४४. सम्प्रदान

सूत्र :- **कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्** (१/४/३२)।

अर्थ :- कर्म के द्वारा जिसको लक्षित किया जाये उस कारक का नाम सम्प्रदान होता है। जैसे- रामः ब्राह्मणाय गां यच्छति = राम ब्राह्मण को गौ देता है। यहां 'गाम्' कर्म ब्राह्मण को लक्षित करता है। अतः ब्राह्मण की सम्प्रदान संज्ञा हुई।

४५. करण

सूत्र :- **साधकतमं करणम्** (१/४/४२)

अर्थ :- क्रिया की सिद्धि में अत्यन्त साधक को करण कहते है। जैसे- स कुदालेन खनति = वह कुदाल से खोदता है।

यहां कुदाल खुदाई क्रिया में अत्यन्त आवश्यक साधन है सो उसकी करण संज्ञा है।

४६. अधिकरण

सूत्र :- **आधारोऽधिकरणम्** (१/४/४५)

अर्थ :- आधार का नाम अधिकरण होता है। जैसे- कटे शेते = चटाई पर सोता है। यहां चटाई आधार है। अतः उसकी अधिकरण संज्ञा हुई।

४७. कर्म

सूत्र :- **कर्त्तुरीप्सिततमं कर्म** (१/४/४९)

अर्थ :- जो कर्त्ता को अत्यन्त इष्ट (प्रिय) है उसकी कर्म संज्ञा होती है। जैसे- रामः फलं खादति=राम फल खाता है। मोहनः पुस्तकं पठति = मोहन पुस्तक पढ़ता है।

यहां फल और पुस्तक कर्ता को अत्यन्त प्रिय हैं अतः इनकी कर्म संज्ञा हुई।

४८. कर्ता

सूत्र :- **स्वतन्त्रः कर्ता** (१/४/५४)

अर्थ :- क्रिया की सिद्धि में जो स्वतन्त्र है उस कारक का नाम 'कर्त्ता' है। जैसे- देवदत्तः पठति। यहां देवदत्त कर्ता है।

४९. हेतु

सूत्र :- तत्प्रयोजको हेतुश्च (१/४/५५)

अर्थ :- कर्ता के प्रेरक की हेतु व कर्ता संज्ञा होती है।

जैसे :- देवदत्तः पाचयति। देवदत्त पकवाता है। यहां देवदत्त प्रेरक होने से हेतु संज्ञक है।

५०. निपात

सूत्र :- **प्राग्रीश्वरान्निपाताः** (१/४/५६)।

अर्थ :- इस सूत्र से लेकर आगे **'अधिरीश्वरे'** (१/४/९६) में ईश्वर शब्द पढ़ा है; उससे पूर्व प्र, च, इत्यादि शब्दों का नाम निपात है।

५१. उपसर्ग

सूत्र :- **प्रादय उपसर्गाः क्रियायोगे** (१/४/४७)।

अर्थ :- प्रादि शब्दों की क्रिया के सम्बन्ध में निपात होते हुए उपसर्ग संज्ञा भी होती है।

प्रश्न :- प्रादि कौन-कौन से शब्द हैं?

उत्तर :- गणपाठ में पठित वे शब्द जिनके आदि में प्र है प्रादि कहलाते हैं। जैसे- प्रचलति। यहां प्र निपात चलति के सम्बन्ध में उपसर्ग संज्ञक है।

५२. गति

सूत्र :- **गतिश्च** (१/४/५६)।

अर्थ :- प्रादि शब्द एवं 'कर्मप्रवचनीयाः' सूत्र के पहले आने वाले ऊरी आदि शब्दों का नाम गति होता है।

५३. कर्मप्रवचनीय

सूत्र :- **कर्मप्रवचनीयाः** (१/४/८२)

अर्थ :- 'अधिरीश्वरे' सूत्र के ईश्वर शब्द तक अनु आदि शब्दों का नाम कर्मवचनीय है।

प्रश्न :- कर्मप्रवचनीय का क्या प्रयोजन है?

उत्तर :- **कर्मप्रवचनीययुक्ते द्वितीया** (२/३/८) अर्थात् कर्मप्रवचनीया-संज्ञक शब्द से युक्त (सम्बन्धित) शब्द से द्वितीया विभक्ति होती है। जैसे :- अनु अर्जुनं योद्धारः।

यहां 'अनु' कर्मवचनीय का सम्बन्ध अर्जुन शब्द के साथ होने से अर्जुन शब्द से परे द्वितीया विभक्ति होती है, इत्यादि कर्मप्रवचनीय संज्ञा के प्रयोजन है।

५४. संहिता

सूत्र :- **परः सन्निकर्षः संहिता** (१/४/१०८)।

अर्थ :- वर्णों की अत्यन्त समीपता को संहिता कहते है। अथवा वर्णों का मेल संहिता अथवा सन्धि कहलाता है।

जैसे :- दधि + अत्र = दध्यत्र।

५५. अवसान

सूत्र :- **विरामोऽवसानम्** (१/४/१०९)।

अर्थ :- विराम की अवसान संज्ञा होती है। यथा :- रामस्। यहां स् की अवसान संज्ञा है।

५६. आमन्त्रित

सूत्र :- सामन्त्रितम् (२/३/४८)।

अर्थ :- सम्बोधन का दूसरा नाम आमन्त्रित भी है।

५७. सम्बुद्धि

सूत्र :- **एकवचनं सम्बुद्धिः** (२/३/४९)।

अर्थ :- सम्बोधन के एकवचन को सम्बुद्धि कहते हैं।

५८. प्रत्यय

धातु और प्रातिपदिक से परे आने वाले शब्दों को प्रत्यय कहते हैं। जैसे :- 'भू' से परे तिप् तथा 'राम' से परे सु इत्यादि आते हैं। अतः तिप् सु इत्यादि का नाम प्रत्यय है।

५९. धातु

सूत्र :- **भूवादयो धातवः** (१/३/१)।

अर्थ :- भू आदि शब्दों का नाम धातु है। (यहां भू आदि शब्दों से अभिप्राय, धातु पाठ में संकलित भू, एध आदि से है।)

६०. उपपद

सूत्र :- **तत्रोपपदं सप्तमीस्थम्** (३/१/९२)।

अर्थ :- **धातोः** (३/१/९१) इस सूत्र से आगे सप्तमी विभक्ति वाला पद उपपद कहाता है। जैसे :- कर्मण्यण् = कर्मणि ७/१ अण् १/१ यहां कर्म उपपद ऐसा जानना चाहिए।

६१. कृत्य

सूत्र :- **कृत्याः** (३/१/९५)।

अर्थ :- 'धातो' से आगे **ण्वुल्तृचौ** (३/१/१३३) सूत्र से पहले के सभी प्रत्यय कृत्यसंज्ञक होते हैं।

जैसे :- यत्, तव्यत्, तव्य, अनीयर् इत्यादि।

६२. कृत्

सूत्र :- **कृदतिङ्** (३/१/९३)।

अर्थ :- **'धातोः'** सूत्र के अधिकार में अर्थात् तीसरे अध्याय की

समाप्ति तक आने वाले तिङ् को छोड़कर शेष प्रत्यय कृत् संज्ञक होते है। जैसे- यत्, तृच्, अण् इत्यादि।

प्रश्न :- कृत् और कृत्य में क्या अन्तर है?

उत्तर :- कृत् संज्ञक प्रत्ययों के अर्न्तगत आने वाले कुछ प्रत्ययों का नाम कृत्य है। सारे कृत्य प्रत्यय कृत् भी हैं परन्तु सारे कृत् प्रत्यय कृत्य नहीं हैं।

६३. सार्वधातुक

सूत्र :- **तिङ्शित् सार्वधातुकम्** (३/१/११३)।

अर्थ :- धातोः के अधिकार में आने वाले तिङ् शित् प्रत्ययों का नाम सार्वधातुक है। तिङ् प्रत्याहार :- तिप् से लेकर महिङ् तक, शित् :- श् जिसका इत् हो। जैसे :- शप्, श इत्यादि।

६४. आर्धधातुक

सूत्र :- **आर्धधातुकं शेषः** (३/४/११४)।

अर्थ :- जिस अवधि तक सार्वधातुक संज्ञा की है, उसमें तिङ् और शित् को छोड़कर शेष प्रत्ययों का नाम आर्धधातुक है। जैसे :- यत्, ण्वुल्, तृच् इत्यादि।

६५. तद्धित

सूत्र :- **तद्धिताः** (४/१/७६)।

अर्थ :- तद्धिताः सूत्र से लेकर पांचवें अध्याय के समाप्ति तक के प्रत्ययों का नाम तद्धित है।
जैसे :- अण्, फिञ्, च्फञ् इत्यादि।

६६. अभ्यास

सूत्र :- **पूर्वोऽभ्यासः** (६/१/४)।

अर्थ :- धातु के प्रथम एकाच् अथवा द्वितीय एकाच् शब्द रूप के दो होने पर पूर्व का नाम अभ्यास होता है।
अच् = प्रत्याहार (स्वर वर्ण)। एकाच् = एक अच् है जिसमें।
जैसे :- जागृ धातु के प्रथम एकाच् का दो हो जाना = जागृ जागृ। यहां पूर्व जागृ का नाम अभ्यास है।

६७. अभ्यस्त

सूत्र :- **उभे अभ्यस्तम्** (६/१/५)।

अर्थ :- एकाचो द्वे प्रथमस्य इत्यादि के जो दो रूप हुए हैं उन दोनों का नाम अभ्यस्त होता है। जैसे- जागृ-जागृ। इन दोनों का नाम अभ्यस्त है।

६८. आम्रेडित

सूत्र :- **तस्य परमाम्रेडितम्** (८/१/२)।

अर्थ :- सारे शब्दरूप के दो होने पर, पर का नाम आम्रेडित होता है।
जैसे- पचति पचति। ग्रामः ग्रामः।
आम्रेडित। आम्रेडित।

६९. उत्तम

शब्द में यदि कम से कम तीन अच् हों तो अन्तिम अच् का नाम उत्तम है। जैसे :- पञ्चभ्यः। यहां य में जो अ है उसका नाम उत्तम है।

७०. उपोत्तम

उत्तम के समीप वाले अच् को उपोत्तम कहा जाता है। जैसे- पञ्चभ्यः में च के अ का नाम उपोत्तम है।

विशेष :- सभी संज्ञाओ को हृदयङ्गम कर लें। इनका अर्थो एवं सिद्धियों में प्रचुर प्रयोग होता है।

अभ्यास

१. टि तथा उपधा में क्या भेद है?

२. रामदत्त, भिद्, सोमसुत्, रामचन्द्र, देवदत्त, शब्दों की टि तथा उपधा संज्ञा लिखो।

३. अभ्यास, गति, भ, अङ्, पद किसे कहते है। उदाहरण सहित लिखो।

४. घु, घि, नदी, उपसर्जन, अपृक्त संज्ञाओं का क्या प्रयोजन है?

५. संज्ञा व संज्ञी किसे कहते हैं?

षष्ठ-प्रकरणम्
(सिद्धिप्रकरणम्)
प्रथमो भागः

(सिद्धि में उपयोगी कुछ विशेष सूत्रों के अर्थ एवं सामान्य नाम)

सूत्र १) उपदेशे ऽजनुनासिक इत् (१/३/२)।

अर्थ :- उपदेश में अनुनासिक अच् की इत् संज्ञा होती है।

उपदेश = महर्षि पाणिनि जी की पाँच पुस्तकों में व्याख्यात अर्थात् लिखित शब्दसमूह। पाँच उपदेश- अष्टाध्यायी, उणादिकोष, लिङ्गानुशासन, धातुपाठ, गणपाठ। अनुनासिक (ँ)

जैसे :- एधँ धातु में इसी सूत्र से अँ की इत् संज्ञा होकर **'तस्य-लोपः'** (१/३/६) से लोप होकर 'एध' बन जाता है।

प्रश्न :- एध में अ धातुपाठ में अनुनासिक नहीं है ?

उत्तर :- पूर्व एधादि धातुओं में अनुनासिक अच् पढ़े थे। अब अनुनासिक चिह्न न दिखाई देने पर भी जिन एधादि धातुओं के अच् का सिद्ध शब्द में लोप दिखाई देता है उन अचों की **'उपदेशे...इत्'** से इत् संज्ञा कर दो।

सूत्र २) हलन्त्यम् (१/३/३)।

अर्थ :- उपदेश में अन्तिम हल् की इत् संज्ञा होती है। हल् = प्रत्याहार। जैसे :- डुकृञ्, लूञ् में **हलन्त्यम्** सूत्र से ञ् इत् होकर **'तस्य लोपः'** से लुप्त हो जायेगा। अतः डुकृ, लू ऐसा रह जाता है।

सूत्र ३) न विभक्तौ तुस्माः (१/३/४)

अर्थ :- उपदेश के अन्तर्गत विभक्ति में वर्तमान तवर्ग, सकार व मकार की इत् संज्ञा नहीं होती।

तु = तवर्ग, स् = सकार, म् = मकार।

उदाहरण :- आत् = पञ्चमी विभक्ति के स्थान पर आदेश।

अम् { **हलन्त्यम्** सूत्र से इत् संज्ञा प्राप्त।
{ **न विभक्तौ तुस्माः** सूत्र से निषेध।

सकार इत् निषेध का उदाहरण :-

जस् -सु, औ, जस् १/३ (जस् प्रथमा का बहुवचन है)।

जस् { **हलन्त्यम्** से स् की इत् संज्ञा प्राप्त।
{ **न विभक्तौ तुस्माः** से निषेध।

अम् = अम् औट् शस् (अम् द्वितीया विभक्ति का एकवचन है)।

जस् { **हलन्त्यम्** सूत्र से म् की इत् संज्ञा प्राप्त।
{ **न विभक्तौ तुस्माः** से निषेध।

सूत्र ४) आदिर्ञिटुडवः (१/३/५)।

अर्थ :- उपदेश में आदि ञि, टु, डु, शब्दरूप की इत् संज्ञा होती है।

उदाहरण - ञिमिदाँ धातु (धातुपाठ उपदेश में)।

मिदाँ = **आदिर्ञिटुडवः** = ञि की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः = ञि इत् का लोप।
मिद् = **उपदेशऽजनुनासिक इत्** = आँ की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः = आँ इत् का लोप।

टु इत् का उदाहरण = टुओँश्वि।

टुओँश्वि = **आदिर्ञिटुडवः** = टु की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः = टु इत् का लोप।
श्वि = **उपदेशे ऽजनुनासिक इत्** = ओँ की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः = ओँ इत् का लोप।

डु इत् का उदाहरण- डुकृञ्।

कृञ् = **आदिर्ञिटुडवः** = डु की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः = डु इत् का लोप।
कृ = **हलन्त्यम्** = ञ् की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः = ञ् इत् का लोप।

सूत्र ५) षः प्रत्ययस्य (१/३/६)।

अर्थ :- उपदेश में प्रत्यय के आदि में स्थित ष् की इत् संज्ञा होती है।

जैसे- ष्वुन् = **शिल्पिनि ष्वुन्** (३/१/१४५)।
वुन् = **षः प्रत्ययस्य** = इत् संज्ञा।
तस्य लोपः - लोप।

वु = **हलन्त्यम्** = न् की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः - लोप।

सूत्र ६) चुटू (१/३/७)।

अर्थ :- उपदेश में प्रत्यय के आदि में स्थित चवर्ग और टवर्ग की इत् संज्ञा होती है। चु = चवर्ग (च्, छ्, ज्, झ्, ञ्)। टु = टवर्ग (ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्)। जैसे- चवर्ग का उदाहरण :- जस्।
अस् = **चुटू** = ज् की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः = ज् का लोप।

टवर्ग का उदाहरण = टा (तृतीया विभक्ति का एकवचन)।
आ = **चुटू** = ट् की इत् संज्ञा।
तस्य लोपः = ट् इत् का लोप।

१. ङी

प्रश्न :- ङी किसे कहते हैं?

उत्तर :- ङीप्, ङीष्, ङीन् इन तीनों प्रत्ययों का नाम सामान्यतया ङी होता है। ये प्रत्यय **'स्त्रियाम्'** (४/१/३) के अधिकार में आते हैं।
ङीप- **ऋन्नेभ्यो ङीप्** (४/१/१५)।
ङीष्- **अन्यतो ङीष्** (४/१/४)।
ङीन्- **शार्ङ्गरवाद्यो ङीन्** (४/१/७३)।

२. आप्

प्रश्न :- आप् किसे कहते हैं?

उत्तर :- टाप्, डाप्, चाप्, का नाम आप् है। ये तीनों प्रत्यय भी स्त्रियां (४/१/३) में आते हैं।
टाप्- **अजाद्यतष्टाप्** (४/१/४)।
डाप्- **डाबुभाभ्यामन्यतरस्याम्** (४/१/१३)।
चाप- **यङश्चाप्** (४/१/७४)

३. क्य

प्रश्न :- क्य किसे कहते हैं?

उत्तर :- क्यच्, क्यङ्, क्यष् का सामान्य नाम क्य है।

क्यच्- **सुप आत्मनः क्यच्** (३/१/८)।
क्यङ्- **कर्तुः क्यङ् सलोपश्च** (३/१/११)।
क्यष्- **लोहितादिडाज्भ्यः क्यष्** (३/१/१३)।

४. णि

प्रश्न :- णि क्या है?

उत्तर :- णिच् और णिङ् का एक नाम णि है।
णिच् = **सत्यापपाशरूपवीणा... णिच्** (३/१/२५)।
णिङ् = **कमेर्णिङ्** (३/१/३०)।

५. औङ्

प्रश्न :- औङ् किसे कहते हैं?

उत्तर :- **स्वौजसमौट्...** सूत्र में आने वाले औ औट् प्रत्ययों का नाम औङ् है।

६. आङ्

प्रश्न :- आङ् किसे कहते हैं?

उत्तर :- तृतीया विभक्ति के एक वचन 'टा' को आङ् कहते हैं।

द्वितीयो भागः

अब तक आपने सिद्धिविषयक कुछ सामान्य नियमों की जानकारी प्राप्त की। अब आगे सिद्धिविषयक विशेष कार्यों का व्याख्यान किया जायेगा।

सिद्धि दो भागों में की जायेगी।

१. सुबन्त, २. तिङन्त।

आवश्यकतानुसार सिद्धियों के अर्न्तगत आने वाले सूत्रों का अर्थ, सिद्धि से पूर्व अथवा पश्चात् किया जाएगा।

सुबन्त

(कृष्णः शब्द की सिद्धि करने की विधि)

(१) संज्ञा प्रकरण में बताये गये **'अर्थदधातुरप्रत्ययः प्रतिपदिकम्'** (१/२/४५) इस सूत्र से 'कृष्ण' शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा हुई।

(२) **ङ्याप्प्रातिपदिकात्** (४/१/१) इस सूत्र ने बताया कि आगे कहे

जाने वाले प्रत्यय ङ्यन्त, आबन्त, और प्रातिपदिक से परे हों। ङ्यन्त = ङी अन्त वाला। आबन्त = आप् अन्तवाला। इस सूत्र से 'कृष्ण' प्रातिपदिक से परे प्रत्यय के विधान का अधिकार प्राप्त हुआ।

(३) स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्... सूप् (४/१/२)।
अनुवृत्ति = ङ्याप्प्रातिपदिकात्, प्रत्ययः, परश्च।

अर्थ :- ङ्यन्त, आबन्त और प्रातिपदिक से सु आदि २१ प्रत्यय होते हैं। **'विभक्तिश्च'** (१/४/१०३) के सुप्त्रिक को सात विभक्तियों में बांटा जाता है।
त्रिक = तीन प्रत्ययों का एक जुट।
जैसे- सु-औ-जस् = एकत्रिक।
इस प्रकार पूर्व प्रदर्शित सात विभागों (विभक्तियों) को पुनः देखें-

प्रथमा विभक्ति	सु	औ	जस्
द्वितीया वि.	अम्	औट्	शस्
तृतीया वि.	टा	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी वि.	ङे	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी वि.	ङसि	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी वि.	ङस्	ओस्	आम्
सप्तमी वि.	ङि	ओस्	सुप्

प्रश्न :- प्रथमा विभक्ति, द्वितीया विभक्ति आदि नाम कैसे पड़े ?

उत्तर :- लोक के अनुसार पहले त्रिक भाग को प्रथमा विभक्ति दूसरे त्रिक को द्वितीया विभक्ति। इस प्रकार सब का नामकरण है। किसी सूत्र से नहीं।
कृष्ण शब्द से सभी २१ प्रत्यय प्राप्त हुए। **प्रत्ययः, परश्च** (३/१/१-२) से ये शब्द परे होते हैं।

सूत्र :- **प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा** (२/३/४६)।

अर्थ :- प्रातिपदिक अर्थमात्र में, लिङ्गमात्र में, तथा परिमाणमात्र में प्रथमा विभक्ति होती है।

प्रातिपदिक अर्थमात्र में 'कृष्ण' शब्द होने से प्रथमा विभक्ति प्राप्त हुई। प्रथमा विभक्ति = सु-औ-जस्।

सूत्र :- **सुपः** (१/४/१०२)।

अर्थ :- सुप् का प्रत्येक त्रिक क्रमशः एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन संज्ञक होता है। ऊपर से **त्रीणि त्रीणि...** (१/४/१००) की अनुवृत्ति आ रही है। अतः एकवचन द्विवचन बहुवचन
सु औ जस्

सूत्र :- **द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने** (१/४/२२)।

अर्थ :- दो को कहना हो तो द्विवचन एक को कहना हो तो एकवचन होता है। कृष्ण शब्द को एकत्व में कहना है सो कृष्ण से परे 'सुँ' एकवचन आकर 'कृष्ण सुँ' बन जाता है।
'कृष्ण सुँ' से **उपदेशे ऽजनुनासिक इत्** (१/३/२) सूत्र से सुँ 'उँ' की इत् संज्ञा होगी तथा **'तस्य लोपः'** से इत् का लोप। शेष रहा 'कृष्ण स्'।

सूत्र :- **ससजुषो रुँः** (८/२/६६)। **अनुवृत्ति = पदस्य** (२/१/१६)।

अर्थ :- पद के अन्त में स्थित स् के स्थान पर तथा सजुष् शब्द के अन्तिम अक्षर के स्थान पर 'रुँ' आदेश होता है।

आदेश = पूर्व स्थानी स् के स्थान पर आने वाला रुँ।
अतः 'कृष्ण रुँ' बना।
'उँ' की **'उपदेशे ऽजनुनासिक इत्'** सूत्र से इत् संज्ञा तथा **'तस्य लोपः'** से इत् का लोप। शेष रहा = 'कृष्ण र्'।

सूत्र :- **खरवसानयोर्विसर्जनीयः** (८/३/१५)।

अर्थ :- खर् प्रत्याहार परे रहते व अवसान में र् के स्थान पर विसर्ग हो जाता है। जिस अक्षर पर रुकते हैं उसकी अवसान संज्ञा होती है। विसर्ग ':' (चिह्न) इस प्रकार अवसान रेफ के स्थान पर विसर्ग होकर कृष्णः शब्द सिद्ध हो जाता है।

सूत्र सम्मुख लिखकर कृष्णः की सिद्धि

कृष्ण = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्** (१/२/४५) इस सूत्र से कृष्ण शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा।

कृष्ण = **ङ्याप्प्रातिपदिकात्** (४/१/१) कृष्ण प्रातिपदिक से प्रत्यय प्राप्ति का अधिकार उपलब्ध।

कृष्ण सुप् (प्रत्याहार) = **स्वौजसमौ...** (४/१/२) कृष्ण शब्द से २१ प्रत्यय प्राप्त।

= **विभक्तिश्च** (१/४/१०३) सुप् का सात विभक्तियों में विभाग

कृष्ण सुँ = औ जस् = **प्रातिपदिक... प्रथमा** (२/३/४६) प्रथमा विभक्ति प्राप्त।

सुपः (१/४/१०२) (इस सूत्र से सुप् का वचनों में विभाग)

कृष्ण सुँ = **द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने** (१/४/२२) एकत्व में एकवचन।

= **उपदेशे ऽजनुनासिक इत्** (१/३/२) ऊँ की इत् संज्ञा।

कृष्ण स् = **तस्य लोपः** (१/३/९) ऊँ का लोप।

= **सुप्तिङन्तं पदम्** (१/४/१४) इस सूत्र से 'कृष्ण स् की पद संज्ञा।

= **पदस्य** (८/१/१६) पद के अधिकार में-

कृष्ण रुँ = **ससजुषो रुँः** (८/२/६६) स् के स्थान में रुँ आदेश।

उपदेशेऽजनुनासिक इत् (१/३/२) रूँ के उँ की इत् संज्ञा।

कृष्ण र् = **तस्य लोपः** (१/३/९) (उँ का लोप)

= **पदस्य** (८/१/१६) (पद के अधिकार में)

कृष्ण = **खरवसानयोर्विसर्जनीयः** (८/३/१५) (अवसान में र् के स्थान पर विसर्ग आदेश।)

= **विरामोऽवसानम्** (१/४/१०९) विराम का नाम अवसान है।

कृष्णौ

सूत्र सम्मुख लिखकर सिद्धि।

कृष्ण = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्** (१/२/४५) इस सूत्र से कृष्ण शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा।

कृष्ण = **ङ्याप्प्रातिपदिकात्** (४/१/१) (कृष्ण प्रातिपदिक से प्रत्यय का अधिकार)

कृष्ण सुप् (प्रत्याहार) = **स्वौजसमौट्छष्टाभ्या... सुप्** (४/१/२) सु

आदि २१ प्रत्यय प्राप्त।

कृष्ण सु औ जस् = **प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा** (२/३/४६) - इससे प्रथमा विभक्ति के तीन प्रत्यय प्राप्त।

सुपः (१/४/१०२) = सूत्र द्वारा सुप् को वचनों में विभक्त करना।

कृष्ण औ = **द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने** (१/४/२२) दो के कहने में द्विवचन।

= **संहितायाम्** (६/१/७०) संहिता के अधिकार में-

= **वृद्धिरेचि** (६/१/८५), **वृद्धिरादैच्** (१/१/१) कृष्ण के अ और ओ दोनों के स्थान पर वृद्धि अ, ऐ, औ, तीन प्राप्त होंगे **'स्थानेऽन्तरतमः'** सूत्र से अ और औ का सदृशतम (अन्तरतम) औ हो गया।

इस प्रकार 'कृष्णौ' शब्द सिद्ध हुआ।

उक्त सिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों के अर्थ :-

सूत्र :- संहितायाम् (६/१/७०)।

अर्थ :- इस सूत्र से आगे **'अनुदात्तं पदमेकवर्जम्** (६/१/१५२) सूत्र तक संहिता अर्थात् सन्धि का अधिकार (विषय) समझना चाहिए।

सूत्र :- वृद्धिरेचि (६/१/८५)।

अनुवृत्ति :- आत्, एकः, पूर्वपरयोः, संहितायाम्।

अर्थ :- सन्धि विषय में अवर्ण से परे 'एच्' प्रत्याहार के वर्ण हों तो दोनों पूर्व अ और पर एच् के स्थान पर वृद्धि एकादेश होता है।

जैसे कृष्ण औ = कृष्णौ। कृष्ण के अ से परे एच् प्रत्याहार में आनेवाला औ। अतः दोनों के स्थान पर वृद्धि औ हो गया।

कृष्णाः

कृष्ण = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्** (१/२/४५) सूत्र द्वारा कृष्ण शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा प्राप्त।

= **ङ्याप्प्रापिदिकात्** (४/१/१) प्रातिपदक कृष्ण से

प्रत्ययविधानार्थ अधिकार।

कृष्ण सुप् = **स्वौजसमौट्.... सुप्** (४/१/२) प्रातिपदिक कृष्ण से २१ प्रत्यय की प्राप्ति।

= **विभक्तिश्च** (१/४/१०३) से सुप् (२१) की विभक्तियों में विभक्त करना।

कृष्ण सु औ जस् (प्रथमाविभक्ति) = **प्रातिप्रदिकार्थलिङ्गपरिणाम वचनमात्रे प्रथमा** (२/३/४६) सूत्र से कृष्ण शब्द प्रातिपदिक होने से प्रथमा विभक्ति की प्राप्ति।

= **सुपः** (१/४/१०२) से सुप्त्रिक (प्रत्येक विभक्ति) को क्रमशः एक वचन द्विवचन बहुवचन में विभक्त करना।

कृष्ण जस् = **बहुषु बहुवचनम्** (१/४/२१) कृष्ण शब्द को बहुत्व में कहने से बहुवचन की प्राप्ति।

= **चुटू** (१/३/७) जस् का 'ज्' इत्।

कृष्ण अस् = **तस्य लोपः** (१/३/६) ज् की इत् संज्ञात्वात् लोप।

संहितायाम् (कृष्ण का अन्त अ एवं अस् का आदि अ समीप होने से संहिता होगी)

कृष्णा स् = **प्रथमयोः पूर्वसवर्णः** (६/१/६८) अक् (प्रत्याहार) से परे प्रथमा का अच् होने पर दोनों के स्थान पर दीर्घ।

कृष्णा रुँ = **ससजुषो रुँः** (८/२/६६) पदान्त स् के स्थान पर रुँ आदेश।

उपदेशेऽजनुनासिक इत् (१/३/२) रूँ के उँ की इत् संज्ञा।

कृष्णा र् = **तस्य लोपः** (१/३/६) उ इत् का लोप।

= **पदस्य** (८/१/१६) पुनः पद के अधिकार में।

कृष्णाः = **खरवसानयोर्विसर्जनीयः** (८/३/१५) र् अवसान में होने से विसर्ग।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **बहुषु बहुवचनम्** (१/४/२१)।

अर्थ :- बहुत्व के कहने में बहुवचन के प्रत्यय होते है।

सूत्र :- **प्रथमयोः पूर्वसवर्णः** (६/१/६८)।

अनुवृत्ति :- संहितायाम् अकः एकः पूर्वपरयोः, दीर्घः, अचि।

शब्दार्थ :- प्रथमयोः = प्रथमा और द्वितीया विभक्ति परे रहते।

अकः = अक् प्रत्याहार से परे।

अर्थ :- अक् से परे प्रथमा और द्वितीया विभक्ति का अच् होने पर पूर्व और पर दोनों के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश हो जाता है।

कृष्णम्

कृष्ण = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् ङ्याप्प्रातिपदिकात्** (४/१/१) (कृष्ण की प्रातिपदिक संज्ञा प्रातिपदिक कृष्ण से प्रत्यय विधान अधिकार)

कृष्ण सुप् (प्रत्याहार) = **स्वौजमौट्...** (४/१/२) कृष्ण शब्द से २१ प्रत्यय प्राप्त

= **विभक्तिश्च** (४/१/१०३) सुप् सात विभक्तियों में बांटा।

कृष्ण अम् औट् शस् = **कर्मणि द्वितीया** (२/३/२) (कर्म संज्ञा होने से कृष्ण से द्वितीया विभक्ति प्राप्त)

= सुपः सुप् को वचनों में बांटा।

कृष्ण अम् = **द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने**– एकत्व को कहने में एकवचन।

संहितायाम्– संहिता के अधिकार में।

कृष्णम् = **अमि पूर्वः** (६/१/१०३) अम् के परे रहते अम् के अ और कृष्ण के अ दोनों के स्थान पर पूर्व कृष्ण का अ हो जाता है।

सूत्रार्थ

कर्मणि द्वितीया (२/३/२)। **अनुवृत्ति** :- अनभिहिते (२/३/१)

शब्दार्थ :- अनभिहिते = न कहा हुआ। जिसके अनुसार क्रियादि में परिवर्तन नहीं होता है। जैसे – रामः गच्छति। यहां राम एकवचन में है और गच्छति भी एकवचन में। रामौ ग्रामं गच्छतः। यहां राम में द्विवचन होने से तदनुसार 'गच्छतः' क्रिया में भी परिवर्तन होकर द्विवचन हो गया। परन्तु 'ग्रामं' कर्म के अनुसार परिवर्तन नहीं होता। अतः ग्राम कर्म अनभिहित कहलाता है।

अर्थ :- (कर्मणि) अनभिहित कर्म कारक में द्वितीया विभक्ति होती है।

सूत्र :- अमि पूर्वः (६/१/१०३)।

अनुवृत्ति :- संहितायाम्, एकः पूर्वपरयोः, अकः।

शब्दार्थ :- अमि = अम् के परे रहते।

अर्थ :- अम् प्रत्यय के परे रहते पूर्व और पर दोनो के स्थान पर पूर्व वर्ण ही आदेश हो जाता है।

कृष्णौ

कृष्ण औट् = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, स्वौजसमौ...सुप्, विभक्तिश्च, कर्मणि द्वितीया, सुपः, द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने।**

कृष्ण औ = **हलन्त्यम्** (इस सूत्र से ट् की इत् संज्ञा) **तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः।**

कृष्णौ = **संहितायाम्, वृद्धिरेचि, वृद्धिरादैच्, स्थानेऽन्तरतमः**

सूत्रार्थ

स्थानेऽन्तरतमः (१/१/४६)।

अर्थ :- स्थान पर प्राप्त होने वाले आदेश अन्तरतम (सदृशतम) होते हैं।

कृष्णान्

कृष्ण शस् = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, स्वौजसमौट्... सुप्, विभक्तिश्च, कर्मणि द्वितीया, सुपः, बहुषु बहुवचनम्, प्रत्ययः परश्च।**

कृष्ण अस् = **लशक्वतद्धिते** (१/३/८) श् की इत् संज्ञा। तस्य लोपः श् इत् का लोप।

संहितायाम् = संहिता के अधिकार में।

कृष्णास् = **प्रथमयोः पूर्वसवर्णः** (६/१/९८) पूर्व अ का दीर्घ।

कृष्णान् = **तस्माच्छसो नः पुंसि** (६/१/९९) दीर्घ से परे स् को न्।

सूत्रार्थ

सूत्र :- तस्माच्छसौ नः पुंसि (६/१/९९)।

अनुवृत्ति :- पूर्वसवर्णः, दीर्घः, संहितायाम्।

अर्थ :- पूर्वसवर्ण दीर्घ से परे पुल्लिङ्ग में शस् के अन्तिम वर्ण स् के स्थान पर न् हो जाता है।

कृष्णेन

कृष्ण टा = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्रातिपदिकात्, स्वौजसमौ...सुप्, विभक्तिश्च्, कर्तृ करणयोस्तृतीया** (२/३/१८) से तृतीया विभक्ति, **सुपः, द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने, प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्ण इन = **यस्मात्प्रययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्** (१/४/१३) **अङ्गस्य** (६/४/१) अङ्ग के अधिकार में।

= **टाङसिङसामिनात्स्याः** (७/१/१२), **यथासंख्यमनुदेशः समानाम्** (१/३/१०) (टा के स्थान पर इन आदेश)

कृष्णेन = **परः सन्निकर्षः संहिता, संहितायाम्, आद्गुणः** (६/१/८४), **अदेङ्गुणः** (१/१/२) अ और इ के स्थान पर ए गुणादेश।

सूत्रार्थ

सूत्र :- कर्तृकरणयोस्तृतीया (२/३/१८)।

अर्थ :- अनभिहित कर्ता और करण कारक में तृतीया विभक्ति होती है।

सूत्र :- टाङसिङसामिनात्स्याः (७/१/१२)।

अनुवृत्ति :- अङ्गस्य, अतः।

अर्थ :- अकारान्त अङ्ग से परे टा, ङसि, ङस के स्थान पर क्रमशः इन, आत्, स्य आदेश हो जाते हैं।
अतः कृष्ण अकारान्त अङ्ग से परे टा के स्थान पर इन हुआ।

सूत्र :- यथासंख्यमनुदेशः समानाम् (१/३/१०)।

शब्दार्थ :- यथासंख्यम् = क्रम के अनुसार। अनुदेशः = पश्चात् आना। समानाम् = समान संख्या वालों का।

अर्थ :- समान संख्या वाले शब्दों के स्थान पर अर्थात् स्थानी और आदेशों की संख्या समान हो तो आने वाले शब्दों का क्रमशः आना होता है। पहले के स्थान पर पहला, दूसरे के स्थान पर

दूसरा, इसी प्रकार सर्वत्र।

जैसे- टा के स्थान पर इन। ङसि के स्थान पर आत्। ङस् के स्थान पर तीसरा स्य।

कृष्णाभ्याम्

कृष्ण भ्याम् = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, स्वौजसमौट्..... सुप्, विभक्तिश्च, कर्तृकरणयोस्तृतीया, सुपः, द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने, प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्णाभ्याम् = **अङ्गस्य, सुपि च** (७/३/१०२), **ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुतः।**

सूत्रार्थ

सूत्र :- **सुपि च** (७/३/१०२)

अनुवृत्ति :- अङ्गस्य, अतः, यञि, दीर्घः।

अर्थ :- यञादि सुप् के परे रहते अदन्त (अकारान्त अङ्ग को दीर्घ होता है।) यञ् = प्रत्याहार। सुप् = प्रत्याहार। भ्याम् का आदि वर्ण भ यञ् प्रत्याहार में आता है। तथा **स्वौजस...** सूत्र के अर्न्तगत होने से भ्याम् सुप् भी है। अतः इसके परे रहने पर अकारान्त कृष्ण के अन्तिम अ के स्थान पर दीर्घ हो जाता है; जैसा कि सिद्धि में दिखाया जा चुका है।

कृष्णैः

कृष्ण भिस् = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, स्वौजसमौट्...सुप्, विभक्तिश्च, कर्तृकरणयोस्तृतीया, सुपः बहुषु बहुवचनम्, प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्ण ऐस् = **यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्** (इस सूत्र से अङ्ग संज्ञा) **अङ्गस्य** = अङ्ग के अधिकार में।

= **अतो भिस ऐस्** = भिस् के स्थान पर ऐस आदेश।

अनेकाल्शित्सर्वस्य = अनेक वर्ण वाला आदेश होने से सम्पूर्ण भिस् के स्थान पर हुआ।

कृष्णैस् = **संहितायाम्,** सन्धि के अधिकार में।

वृद्धिरेचि = अ से परे ऐ होने से दोनों के स्थान पर वृद्धि।

स्थानेऽन्तरतमः = सदृशतम आदेश दोनों के स्थान पर ऐ वृद्धि संज्ञक।

कृष्णैः = स् के स्थान पर विसर्ग। कृष्णः के स् के समान।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **अतो भिस ऐस्** (७/१/९)। **अनुवृत्ति** :- अङ्गस्य।

अर्थ :- अकारान्त अङ्ग से परे भिस् के स्थान पर ऐस् आदेश होता है।

कृष्णाय

कृष्ण ङे = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्; स्वौजसमौट्... सुप्, विभक्तिश्च, कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्, चतुर्थी सम्प्रदाने,** (२/३/१३) सम्प्रदान कारक में चतुर्थी विभक्ति। **सुपः, द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने, प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्ण य = **अङ्गस्य** = अङ्ग के अधिकार में।

ङेर्यः (७/३/१३) ङे के स्थान पर य आदेश।

अनेकाल्शित् सर्वस्य (यहां य आदेश अन्त्य अल् के स्थान में नहीं अपितु सम्पूर्ण के स्थान पर)

कृष्णाय = अङ्ग के अधिकार में ही **सुपि च** (७/३/१०२) से सुप् परे रहते अदन्त के अ को दीर्घ। **ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुप्तः** से दीर्घ की परिभाषा।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **ङेर्यः** (७/३/१३) **अनुवृत्ति** :- अङ्गस्य, अतः।

अर्थ :- अकारान्त अङ्ग से परे ङे के स्थान पर य आदेश होता है।

कृष्णाभ्याम्

कृष्ण भ्याम् = यहां सब कार्य पूर्व प्रदर्शित कृष्णाभ्याम् ३/२ के समान होंगे, केवल **'कर्तृकरणयोस्तृतीया'** के स्थान पर **'चतुर्थी सम्प्रदाने'** विशेष लगेगा।

कृष्णेभ्यः

कृष्ण भ्यस् = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्,**

स्वौजसमौट्... सुप्, विभक्तिश्च, चतुर्थी सम्प्रदाने, सुपः, बहुषु बहुवचनम्, प्रत्ययः, परश्च।

कृष्णेभ्यस् = **अङ्गस्य** = अङ्ग के अधिकार में।

बहुवचने झल्येत् (७/३/१०३) = झलादि बहुवचन 'भ्यस्' के परे रहते कृष्ण के अन्तिम अ के स्थान पर 'ए' आदेश हो गया।

सुप्तिङन्तं पदम् (१/४/१४) = सम्पूर्ण शब्द 'कृष्णेभ्यस्' की पद संज्ञा।

कृष्णेभ्य रुँ = पदस्य = पद के अधिकार में **ससजुषो रुँः** (८/२/६६) से स् को रुँ।

कृष्णेभ्यर् = **उपदेशेऽजनुनासिक इत्** (१/३/२) उँ की इत् संज्ञा। **तस्य लोपः** (१/३/९) से लोप। **अदर्शनं लोपः**।

विरामोऽवसानम् (१/४/१६६) सूत्र से र् की अवसान संज्ञा।

कृष्णेभ्यः = **खरवसानयोर्विसर्जनीयः** (८/३/१५)।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **बहुवचने झल्येत्** (७/३/१०३)। **अलोन्त्यस्य।**

अनुवृत्ति :- अङ्गस्य, सुपि, अतः।

शब्दार्थ :- एत् = एवर्ण। झलि = झल् प्रत्याहार के परे रहते।

अर्थ :- झलादि सुपि बहुवचन के परे रहते अकारान्त अङ्ग के अन्तिम वर्ण के स्थान पर एकारादेश हो जाता है।

कृष्णात्

कृष्ण ङसि = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्यापप्रातिपदिकात्; स्वौजसमौट्... सुप्, विभक्तिश्च, अपादाने पञ्चमी** (२/३/२८), **सुपः, द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने, प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्ण आत् = **अङ्गस्य** के अधिकार में = **टाङसिसामिनात्स्याः** (७/१/१२) से ङसि के स्थान पर **यथासंख्यमनुदेशः समानाम्** के क्रम से आत् आदेश।

संहितायाम् = संहिता के अधिकार में

कृष्णात् = **अकः सवर्णे दीर्घः** (६/१/९७) = अक प्रत्याहार से परे आ (सवर्ण) परे होने पर दोनों के स्थान में दीर्घ आदेश।

ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुतः (१/२/२७) दीर्घ की परिभाषा।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **अकः सवर्णे दीर्घः** (६/१/९७)।

अनुवृत्ति :- अचि, एकः पूर्वपरयोः, संहितायाम्।

शब्दार्थ :- सवर्णे = सवर्णीय अक्षर परे होने पर।

अर्थ :- अक् प्रत्याहार से उत्तर सवर्ण अच् परे हो तो पूर्व और पर के स्थान में दीर्घ एकादेश होता है।

कृष्णाभ्याम्

३/२ के समान केवल **'कर्तृकरणयोस्तृतीया'** के स्थान पर **'अपादाने पञ्चमी'** विशेष लगेगी।

कृष्णेभ्यः

कृष्णेभ्यः ४/३ की तरह केवल **'चतुर्थी सम्प्रदाने'** के स्थान पर **'अपादाने पञ्चमी'** विशेष लगेगा।

कृष्णस्य

कृष्ण ङस् = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, स्वौजसमौट्... सुप्, विभक्तिश्च, षष्ठी शेषे** (२/३/५०) = कर्मादि कारकों से शेष में षष्ठी विभक्ति। **सुपः द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने, प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्णस्य = **अङ्गस्य, टाङसिङसामिनात्सयाः** (७/१/१२), **यथासंख्यामनुदेशः समानाम्** = से ङस् के स्थान पर स्य।

कृष्णयोः

कृष्ण ओस् = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, स्वौजसमौट्... सुप्, विभक्तिश्च, षष्ठी शेषे, सुपः द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्णे ओस् = **अङ्गस्य,** अङ्ग के अधिकार में **ओसि च** (७/३/१०४) ओस् के परे रहते कृष्ण के अन्त्य अ के स्थान पर ए।

कृष्ण अय् ओस् = **संहितायाम्** संहिता के अधिकार में। **एचोऽयवायावः**

= एच् प्रत्याहार के स्थान पर अय् आदि आदेश हो जाते हैं। **यथासंख्यमनुदेशः समानाम्** से एच् = (ए, ओ, ऐ, औ) के स्थान पर क्रमशः अय्, अव्, आय्, आव् ये चार आते हैं। अतः यहां ए के स्थान पर अय् आया।

कृष्णयोस् = स् को सु के समान पहले रूँ पुनः

कृष्णयोः = रूँ के र् को विसर्ग।

कृष्णानाम्

कृष्ण आम् = सब सूत्र ६/२ के समान लगकर केवल = **'बहुषु बहुवचनम्'** भिन्न से यहां 'आम्' आता है।

कृष्ण नुँट् आम्- अङ्ग के अधिकार में।

'ह्रस्वनद्यापो नुँट्' (७/१/५४) कृष्ण शब्द ह्रस्व अन्त वाला होने से आम् को नुँट् आगम हुआ। **आद्यन्तौ टकितौ** (१/१/४५) से टित् आगम आम् के आदि में आया।

कृष्ण नाम् = **हलन्त्यम्** से नुँट् के ट् की इत् संज्ञा, **उपदेशेजऽजनुनासिक इत्** = उँ की इत् संज्ञा। **तस्य लोपः** = इत् संज्ञक ट् और उँ का लोप।

कृष्णानाम् = **अङ्गस्य** = पुनः अङ्ग के अधिकार में।

नामि = नाम् के परे रहने पर कृष्ण के अन्त्य अ के स्थान पर दीर्घ। **ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुतः** = दीर्घ की परिभाषा।

सूत्रार्थ

सूत्र :- (१) **ह्रस्वनद्यापो नुँट्** (७/१/५४)।

(नदी = दीर्घ ईकारान्त तथा दीर्घ ऊकारान्त शब्द। आप् = टाप्, डाप, चाप्)

अर्थ :- ह्रस्वान्त, नदीसंज्ञक और आबन्त (आप् अन्त) अङ्गसंज्ञक शब्दों से परे आम् को नुँट् का आगम होता है।

सूत्र :- (२) **आद्यन्तौ टकितौ** (१/१/४५)।

(टित् ट् वर्ण जिसका इत् हो जैसे नुँट्, कित् = क् जिसका इत् हो जैसे वुक्)।

अर्थ :- षष्ठी विभक्ति के द्वारा निर्दिष्ट को टित् आगम आदि में तथा

कित् आगम अन्त में होता है।

सूत्र :- (३) **नामि** (६/१/३)

अर्थ :- नाम् के परे रहते अच् प्रत्याहार जिसके अन्त में है ऐसे अङ्ग को दीर्घ हो जाता है।

जैसे :- 'कृष्ण' में अन्तिम 'अ' अच् प्रत्याहार के अन्तर्गत है।

प्रश्न :- अच् का ग्रहण कैसे किया? सूत्र व अनुवृत्ति में तो नहीं है?

उत्तर :- **अचश्च** (१/२/२८) इस परिभाषा सूत्र में ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत शब्दों के द्वारा जहां ह्रस्व, दीर्घ, और प्लुत का विधान हो, वह अच् के स्थान पर होता है, ऐसा समझना चाहिये।

कृष्णे

कृष्ण ङि = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, स्वौजसमौट्... सुप, विभक्तिश्च, सप्तम्यधिकरणे च** (७/३/३६) **आधारोऽधिकरणम्, सुपः द्व्येकयोर्द्विवचनैक-वचने, प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्ण इ = **लशक्वतद्धिते, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः।**

= **संहितायाम्** संहिता के अधिकार में।

= **आद्गुणः** (६/१/८४) कृष्ण के अन्तिम अवर्ण से परे इ अच् होने पर दोनों के स्थान पर गुण (अ, ए, ओ) तीनों

कृष्णे = **स्थानेऽन्तरतमः** (१/१/४६) से सदृशतम आदेश की प्राप्ति होने से 'अ, इ' दोनों के स्थान पर 'ए' गुण आया।

कृष्णयोः

सब सूत्र ६/२ के समान लगेंगे केवल षष्ठी शेषे के स्थान पर **'आधारोऽधिकरणम्'** तथा **'सप्तम्यधिकरणे च'** विशेष होंगे।

कृष्णेषु

कृष्ण सुप् = **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, स्वौजसमौट्... सुप्, विभक्तिश्च, आधारोऽधिकरणम् सप्तम्यधिकरणे च, सुपः, बहुषु बहुवचनम्, प्रत्ययः, परश्च।**

कृष्ण सु = **हलन्त्यम्** प् की इत् संज्ञा।

तस्य लोपः प् इत् का लोप।

कृष्णे सु = **अङ्गस्य** अङ्ग के अधिकार में।
बहुवचने झल्येत्, अलोऽन्त्यस्य, कृष्ण के अन्त्य 'अ' के स्थान पर 'ए'।

कृष्णेषु = **इण्कोः** (८/३/५७) = इण् प्रत्याहार में आने वाले 'ए' से परे **आदेशप्रत्यययोः** (८/३/५९) सूत्र से स् के स्थान पद ष् आदेश हुआ।

सूत्रार्थ

सूत्र :- (१) **इण्कोः** (८/३/५७)। (इण् = प्रत्याहार। कु = कवर्ग)।
अर्थ :- इण् और कवर्ग से परे आगे आने वाले सूत्रों का कार्य होगा। यह अधिकार सूत्र है।

सूत्र :- (२) **आदेशप्रत्यययोः** (८/३/५९)।
अनुवृत्ति :- **संहितायाम् इण्कोः, सः, अपदान्तस्य मूर्द्धन्यः, नुम्विसर्जनीयशर्व्यवायेऽपि।**
(आदेश = धातुपाठ में षकारादि धातुओं के आदि ष के स्थान पर 'धात्वादेः षः सः' से स् होना आदेश है)।
अर्थ :- इण् और कवर्ग से परे नुँमादि का व्यवधान हो अथवा न हो तो भी आदेश के 'स्' तथा प्रत्यय के 'स्' को मूर्द्धन्य (ष्) आदेश हो जाता है।

हे कृष्ण !

कृष्ण सुँ = सब कार्य १/१ के समान केवल **'प्रतिपदि... प्रथमा'** के स्थान पर **'सम्बोधने च'** से एकवचन में सुँ आया। **एकवचनं सम्बुद्धिः** से सुँ की सम्बुद्धि संज्ञा। पूर्ववत् अनुबन्ध लोप करके

कृष्ण = **'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः'** से सुँ के स् का लोप। **'अदर्शनं लोपः'** लोप की परिभाषा।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धेः** (६/१/६७)। **अनुवृत्ति** :- हल्, लोपः। एङ् = प्रत्याहार। (सम्बुद्धि = सम्बोधन का एकवचन ६/१ में सम्बुद्धेः)

अर्थ :- एङन्त और ह्रस्वान्त से परे सम्बुद्धि के हल् का लोप हो जाता है।

हे कृष्णौ !

सब कार्य प्रथमाविभक्ति के द्विवचन के समान, केवल **'प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा'** के स्थान पर **'सम्बोधने च'** विशेष लगेगा।

हे कृष्णाः !

प्रथमा विभक्ति बहुवचन की तरह 'सब कुछ, केवल **प्रातिपदि. .... प्रथमा** की बजाय सम्बोधने च' विशेष लगेगा।

कृष्ण शब्द के सब रूपों की सिद्धि के समान अकारान्त पुलिङ्ग पुरुष, राम, मोहन, देवदत्त आदि हजारों शब्दों के सभी रूपों को सिद्ध कर सकते हैं। यही पाणिनीय व्याकरण का वैशिष्ट्य है।

अकारान्त नपुंसकलिङ्ग फल शब्द

फलम् १/१

फल सुँ = कृष्ण १/१ की सिद्धि के समान सब सूत्र लगकर 'फल सुँ' यह बना।

फल अम् = **अङ्गस्य** (६/४/१) अङ्ग के अधिकार में **अतोऽम्** (७/१/२४) अकारान्त नपुंसकलिङ्ग अङ्ग से परे सु के स्थान पर 'अम्' आदेश।

फलम् = **सहितायाम्,** संहिता के अधिकार में, **अमि पूर्वः** (६/१/१०३) अम् के परे रहते अम् का अ व फल का अन्तिम 'अ' दोनों के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **अतोऽम्** (७/१/८४)। **अनुवृत्ति** :- अङ्गस्य स्वमोर्नपुंसकात्।
अर्थ :- अकारान्त नपुंसकलिङ्ग से परे सु और अम् को अम् आदेश हो जाता है।

सूत्र :- **अमि पूर्वः** (६/१/१०३)।
अर्थ :- अक् के परे आम् हो तो पूर्व पर दोनों के स्थान पर एकादेश हो जाता है।

फले १/२

फल औ = कृष्ण शब्द की प्रथमाविभक्ति द्विवचन में लगने वाले सब सूत्र लगाकर 'फल औ' बना।

फल शी = **अङ्गस्य,** अङ्ग के अधिकार में, **नपुंसकाच्च** (७/१/१९) सूत्र से औ के स्थान पर शी प्राप्त।

फल ई = **लशक्वतद्धिते, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः,** से श् का लोप।

फले = संहिता के अधिकार में, **आद्गुणः,** से अ और ई के स्थान पर गुण प्राप्त। **अदेङ्गुणः,** गुण की परिभाषा। **स्थानेऽन्तरतमः** से 'अ' 'ई' दोनों के स्थान पर सदृशतम गुण 'ए' प्राप्त होकर फले बना।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **नपुंसकाच्च** (७/१/१९)। अनुवृत्ति = औङः, शी, अङ्गस्य।

शब्दार्थ :- औङः, = औ और औट् के स्थान पर।

अर्थ :- नपुंसक अङ्ग से परे औङ् (औ, औट्) के स्थान पर शी आदेश होता है।

फलानि १/३

फल जस् = कृष्ण शब्द प्रथमाविभक्ति बहुवचन के समान सभी सूत्र लगकर 'फल जस्'।

फल शि = **अङ्गस्य** = अङ्ग के अधिकार में, **जश्शसोः शिः** (७/१/२०) शि आदेश शित् होने से सारे जस् के स्थान पर हुआ- **'अनेकाल्शित् सर्वस्य'** से।

फल नुँम् शि = **शि सर्वनामस्थानम्** (१/१/४१) शि का नाम सर्वनामस्थान अङ्गस्य पुनः अङ्ग के अधिकार में, **नपुंसकस्य झलचः** (७/१/२२) = नपुंसक लिङ्ग अजन्त को सर्वनामस्थान के परे रहते नुँम् का आगम, **मिदचोऽन्त्यात्परः** (१/१/४६) से मित् नुँम् फल के अन्तिम अच् से परे बैठा।

फल न् इ = **उपदेशेऽजनुनासिक इत्-** नुँम् के उ की इत् संज्ञा, **हलन्त्यम्** = म् की इत् संज्ञा, **लशक्वतद्धिते** = शि के श् की इत् संज्ञा, **तस्य लोपः** = उँ, म, श का लोप।

फलानि = अङ्ग के ही अधिकार में सर्वनामस्थान शि का इ परे रहते **'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ'** (६/४/८) से न की उपधा फल के अन्त्य अ को दीर्घ।

सूत्रार्थ

सूत्र :- (१) **नपुंसकस्य झलचः** (७/१/७२)।

अनुवृत्ति :- अङ्गस्य, नुँम्, सर्वनामस्थाने।
(झल्=प्रत्याहार। अच=प्रत्याहार)

अर्थ :- सर्वनामस्थान के परे रहते झलन्त तथा अजन्त नपुंसक लिङ्ग अङ्ग को नुँम् का आगम हो जाता है।

सूत्र :- (२) **मिदचोऽन्त्यात्परः** (१/१/४६)।

शब्दार्थ :- मित् = म् जिसका इत् है, जैसे नुँम्।
अन्त्यात् = अचः = अन्तिम अच् प्रत्याहार से परे।

अर्थ :- मित् आगम अन्तिम अच् से परे होता है। अतः फल के अन्त्य वर्ण 'ल' के अ से परे नुँम् आया।

प्रश्न :- आगम शब्द न सूत्र में है न अनुवृत्ति में, पुनः अर्थ करते समय कहां से लिया गया?

उत्तर :- व्याकरण शास्त्र में टित्, कित् तथा मित् को आगम कहते हैं। यहां नुँम् मित् है, अतः अर्थ में इसे आगम कहा गया।

सूत्र :- (३) **सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ** (६/४/८)

अनुवृत्ति :- अङ्गस्य, नोपधायाः, दीर्घः।
सर्वनामस्थाने = शि व सुट् प्रत्याहार परे हों तो।
असम्बुद्धौ = सम्बोधन का एकवचन परे न हो।
नोपधायाः = न की उपधा को।

अर्थ :- सर्वनामस्थान के परे रहते नकारान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ हो जाता है।

आगे 'फलम् २/१, फले २/२, फलानि २/३' की सिद्धि भी प्रथमा विभक्ति के तुल्य ही है। केवल **'प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाण-वचनमात्रे प्रथमा'** के स्थान पर **'कर्मणि द्वितीया'** सूत्र

लगेगा। तृतीया एकवचन से लेकर आगे रूपों की सिद्धि कृष्ण शब्द के समान जानें।

अकारान्त नपुंसक लिङ्ग वन, धन इत्यादि अनेक शब्दों के रूपों की सिद्धि फल शब्द के समान जानें।

तिङन्तसिद्धि

(पठ धातु लट् लकार में)

पठति (प्र.ए.) प्रथमपुरुष एकवचन

सर्वप्रथम पठँ शब्द की **भूवादयो धातवः** (१/३/१) सूत्र से धातु संज्ञा बना लो। पुनः **उपदेशेऽजनुनासिक इत्,** सूत्र से ठँ के अँ की इत् संज्ञा करके **'तस्य लोपः'** (१/३/९) से लोप कर दो 'पठ्' यह रूप बन गया।

सूत्र :- **धातोः** (३/१/९१) **प्रत्ययः** (३/१/१), **परश्च** (३/१/२)।

अर्थ :- धातु से परे प्रत्यय होता है। इससे पठ् धातु से परे प्रत्यय विधान करने का अधिकार प्राप्त हुआ।

सूत्र :- **वर्तमाने लँट्** (३/२/१२३)।

अनुवृत्ति :- **धातोः, प्रत्ययः, परश्च।**

अर्थ :- वर्तमानकाल में धातु से परे लँट् प्रत्यय होता है। इससे पठ् धातु से लँट् प्रत्यय आया। अतः 'पठ् लँट् यह रूप बना।

हलन्त्यम् (१/३/३) से लँट् के अन्तिम ट् की इत् संज्ञा होकर दोनों अ ट् का **तस्य लोपः** (१/३/९) से परे शेष रहा = पठ् ल्।

सूत्र :- **लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः** (३/४/६९)।

अनुवृत्ति :- कर्त्तरि, धातोः।

अर्थ :- लकार सकर्मक धातुओं से कर्मवाच्य व कर्त्तृवाच्य में होते हैं तथा अकर्मक धातुओं से भाववाच्य व कर्त्तृवाच्य में होते हैं।

नोट :- कर्त्तृवाच्यादि तीन वाच्यों के सम्बन्ध में सातवें प्रकरण में देखें। इस प्रकार पठ् धातु से ल् अर्थात लकार कर्त्तृवाच्य में हुआ।

प्रश्न :- लकार किसे कहते हैं?

उत्तर :- लँट्, लिँट्, लुँट्, लृँट्, लोँट्, लँङ् लिँङ् (विधि व आशीः) लुँङ्, लृँङ् इन दश प्रत्ययों के अन्तिम ट् और ङ् **हलन्त्यम्** (१/३/३) से तथा अँ, इँ, उँ, ऋँ, एँ, ओँ **उपदेशेऽजनुनासिक**

इत् (१/३/२) से इत् संज्ञक होकर **'तस्य लोपः'** से लोप हो जाने पर दश (ल्) लकार रह जाते हैं। अतः इनको लकार कहते हैं।

सूत्र :- **लस्य** (३/४/७७)। **अनुवृत्ति** :- **धातोः।**

अर्थ :- धातु से परे विद्यमान ल् के स्थान पर आगे आने वाले तिपादि १८ प्रत्यय आदेश होते हैं।

सूत्र :- **तिप्तस्झिसिप्थस्थमिब्वस्मस्तातांझथासाथांध्वमिड्वहिमहिङ्** (३/४/७८)

अनुवृत्ति :- धातोः, लस्य।

अर्थ :- धातु से परे ल् के स्थान में तिप् तस् झि आदि अठारह प्रत्यय होते हैं। ९ परस्मैपद के तथा ९ आत्मनेपद के। इनकी विशेष व्याख्या पञ्चम प्रकरण (अर्थप्रकरण) में देखें।

सूत्र :- **लः परस्मैपद** (१/४/९८)

लकार के स्थान पर आने वाले तिपादि प्रत्यय परस्मैपद संज्ञक होते है।

सूत्र :- **तङानावात्मनेपदम्** (१/४/९९)

अर्थ :- तङ् और आन (पूर्वप्रदर्शित) आत्मेपद संज्ञक होते हैं।

इस प्रकार तङ् प्रत्याहार के ९ आत्मनेपद प्रत्ययों को छोड़कर शेष ९ प्रत्यय परस्मैपद संज्ञक होते हैं।

अब यहां पठ् धातु के ल् के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय हो अथवा परस्मैपद, इसका निर्णायक निम्न सूत्र है।

सूत्र :- **शेषात् कर्त्तरि परस्मैपदम्** (१/३/७८)। **अनुवृत्ति** :- कर्त्तरि।

अर्थ :- शेष धातुओं से शुद्ध कर्त्तृ वाच्य में परस्मैपद के प्रत्यय होते हैं।

प्रश्न :- शेष का क्या अभिप्राय है?

उत्तर :- आत्मनेपद जिन धातुओं से किया है उनसे शेष धातुयें। पठ् धातु आत्मनेपद में नहीं है, अतः इससे परस्मैपदसंज्ञक प्रत्यय आयेंगे, जो निम्न तालिका में दिखाये हैं।

पठ् परस्मैपद ९

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन	
प्रथम पुरुष	तिप्	तस्	झि।	प्रथम त्रिक्
मध्यम पुरुष	सिप्	थस्	थ।	द्वितीय त्रिक्
उत्तम पुरुष	मिप्	वस्	मस्।	तृतीय त्रिक्

सूत्र :- तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः (१/४/१००)।

अर्थ :- तिङ् के सभी तीन-तीन प्रत्ययों के एक-एक जुट क्रमशः प्रथम, मध्यम, उत्तम संज्ञक होते हैं।

इससे तिङ् को प्रथमादि तीन पुरुषों में बांटा गया।

सूत्र :- शेषे प्रथमः (१/४/१०७)।

अर्थ :- जिसके उपपद में युष्मद् अस्मद् शब्द न हों तो ऐसे शेष उपपद के रहने पर या न रहने पर प्रथम पुरुष होता है।

प्रश्न :- उपपद किसे कहते हैं?

उत्तर :- पद के समीपस्थ दूसरे पद को उपपद कहते हैं। जैसे- रामः पठति। यहां पठति के समीप वर्तमान 'रामः' शब्द उपपद है। एवं पठ् से परे तीन प्रथम पुरुष के प्रत्यय प्राप्त हो गए। पठ् + तिप्, तस् झि (प्रथम पुरुष)।

सूत्र :- तान्येकवचनद्विवचनबहुवचनान्येकशः (१/४/१०१)।

अनुवृत्ति :- तिङः त्रीणि त्रीणि।

अर्थ :- तिङ् के सभी त्रिक् एक-एक करने पर क्रमशः एकवचन, द्विवचन, बहुवचन संज्ञक होते हैं।

तदनुसार तिप् = एकवचन, तस् = द्विवचन, और झि बहुवचन।

अब तिप् एकवचन ही धातु से परे आये इसके लिए निम्न सूत्र है।

सूत्र :- द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने (१/४/२२)।

अर्थ :- द्वित्व के कहने में द्विवचन एंव एकत्व के कहने में एकवचन होता है। क्योंकि 'पठति' शब्द एकवचन में है अतः पठ् धातु से परे ल् के स्थान पर एकवचन का तिप् आयेगा।

'पठ् तिप्' यह रूप बना।

सूत्र :- कर्त्तरि शप् (३/१/६८)। **अनुवृत्ति :-** धातोः, सार्वधातुके।

अर्थ :- धातु से कर्तृ वाच्य में सार्वधातुक के परे रहते शप् प्रत्यय होता है। अतः रूप बना- पठ्, शप्, तिप्।

तिप् सार्वधातुक प्रत्यय है। सार्वधातुक संज्ञा के विषय में संज्ञा प्रकरण में बता चुके हैं।

हलन्त्यम् (१/३/३) से 'शप्' 'तिप्' के अन्त्य प् की इत् संज्ञा **'लशक्वतद्धिते'** से शप् के श् की भी इत् संज्ञा होकर तस्य लोपः से तीनों प् प् श् का लोप हो गया।

पठ् अ ति । शेष इनको मिला दो, बन गया पठति।

इस सिद्धि को ध्यान से पढ़कर स्मरण कर ले तथा सूत्रों का अर्थ भी समझ लें। क्योंकि इसी के आधार पर आगे तिङन्त सिद्धियों को लिखा जायेगा।

सम्मुख सूत्र लिखकर सिद्धि
पठति।

पठँ व्यक्तायां वाचि

पठ् = **उपदेशेऽजनुनासिक इत्, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः।**

पठ् = **भूवादयो धातवः** से पठ् की धातु संज्ञा।
धातोः = धातु के अधिकार में।

पठ् लँट्- **वर्तमाने लँट्** (३/२/१२३) धातु से वर्तमान काल में लँट्।
प्रत्ययः (३/१/१) लँट् की प्रत्यय संज्ञा।
परश्च (३/१/२) पठ् से परे प्रत्यय विधान।

पठ् ल् **उपदेशेऽजनुनासिक इत्** = लँ के अँ की इत् संज्ञा, **तस्य लोपः** अँ का लोप। **हलन्त्यम्** = ट् की इत् संज्ञा, **तस्य लोपः** = इत् ट् का लोप। **अदर्शनं लोपः** = लोप की परिभाषा (दिखाई न देना)।

पठ् तिप् = **लस्य** = ल के स्थान पर। **लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः** (३/४/६९) से कर्त्तरि में ल्।
तिप्तस्झिसि... महिङ् (३/४/७८) ल् के स्थान पर १८ प्रत्यय। **लः परस्मैपदम्** (१/४/९८) लादेशों का परस्मैपद नाम **तङानावात्मने पदम्** (१/४/९९) उक्त १८ प्रत्ययों में अन्तिम ९ प्रत्ययों का नाम आत्मनेपद। इस प्रकार पहले ९ प्रत्ययों की परस्मैपद संज्ञा रही। **शेषत्कर्त्तरि परस्मैपदम्** (१/३/७८) शेष पठ् से परस्मैपद प्राप्त। **तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथमाध्योत्तमाः** (१/४/१००) तिङ् का पुरुषों में विभाग। **शेषे प्रथमः** (१/४/१०७) सूत्र से प्रथमपुरुष = तिप्-तस्-झि

प्राप्त। **तान्येकवचनद्विवचनबहुवचनान्येकशः** (१/४/१०१)। तीन-तीन में से एक-एक की क्रमशः एकवचन, द्विवचन, बहुवचन संज्ञा। **द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने** (१/४/२२) = एकत्व में एकवचन प्रत्यय लकार के स्थान पर आया।

पठ् शप् तिप् = **तिङ्शित्सार्वधातुकम्** (३/४/११३) तिप् का नाम सार्वधातुक, **कर्त्तरि शप्** (३/१/६८) पठ् से परे शप् हुआ तिप् सार्वधातुक के परे रहने पर।

पठ अ ति = **हलन्त्यम्** (१/३/३) से तिप् तथा शप् के 'प्' की एवं **लशक्वतद्धिते** (१/५/८) से शप् के 'श्' की इत् संज्ञा होकर **तस्य लोपः** (१/३/६) से लोप हो गया। **अदर्शनं लोपः** (१/१/५६) न दिखाई देने का नाम लोप।

पठति = मिला दो। रूप सिद्ध हुआ।

पठतः

पठँ = **भूवादयो धातवः** = पठँ की धातु संज्ञा।

पठ् **उपदेशेऽजनुनासिक इत्, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः** से पठँ के अन्तिम अँ का लोप।

पठ् लट् = **धातोः** = धातु के अधिकार में।

वर्तमाने लँट्, प्रत्ययः, परश्च, लँट् प्रत्यय आया।

पठ् ल् = **उपदेशेऽजनुनासिक इत्, हलन्त्यम्, तस्य लोपः** = से लँट् के अ और ट् का लोप।

पठ् तस् = **लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः, लस्य, तिप्तस्झि... महिङ्, लः परस्मैपदम्, तङानावात्मनेपदम्, शेषात् कर्त्तरि परस्मैपदम्, तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्योत्तमाः, शेषे प्रथमः, तान्येकवचनद्विवचनबहुवचनान्येकशः, द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने** = से ल् के स्थान पर द्विवचन 'तस्' आया।

पठ् शप् तस् = **तिङ्शित्सार्वधातुकम्, कर्त्तरि शप्** से तस् सार्वधातुक के परे रहते धातु से शप् प्रत्यय आया।

पठ् अ तस् = **हलन्त्यम्, लशक्वतद्धिते, तस्य लोपः**, से शप् के श् और प् का लोप हो गया। यद्यपि 'तस्' का स् भी हलन्त है, परन्तु **'न विभक्तौ तुस्माः'** से इत् संज्ञा नहीं होती।

पठतस् = **पदस्य** = पद के अधिकार में।

पठत रुँ = **'ससजुषो रुँः'** से स् के स्थान में रुँ आदेश।

पठत = **उपदेशेऽजनुनासिक इत्,** तस्य लोपः से रुँ के उँ का लोप।

पठतः = **पदस्य** पुनः पद के अधिकार में **सुप्तिङन्तं पदम्।** पद की परिभाषा **खरवसानयोर्विसर्जनीयः** (८/३/१५) से अवसान र् के स्थान पर विसर्ग आदेश **'विरामोऽवसानम्'**। अवसान की परिभाषा।

इस प्रकार यह पठतः रूप सिद्ध हुआ।

पठन्ति

पठ् शप् झि = पठति के समान सभी सूत्र लगाकर केवल **द्वेयकयोर्द्विवचनैकवचने'** के स्थान पर **'बहुषु बहुवचनम्'** विशेष सूत्र लगाओ।

पठ् अ झि = शप् के श् एवं प् का लोप पूर्ववत् कर लें।

पठ् अ अन्त् इ = **यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्, अङ्गस्य** के अधिकार में **झोऽन्तः** (७/१/३) से झि के झ् को अन्त् आदेश। **अनेकाल्शित्सर्वस्य** से सारे झि के स्थान पर अन्त्।

पठ् अन्ति = **संहितायाम्** संहिता के अधिकार में।

पठन्ति = **अतो गुणे** = से शप् के अ और अन्ति के अ के स्थान में एक अन्ति का अ गुणादेश हुआ।

सूत्रार्थ

सूत्र :- (१) **झोऽन्तः** (७/१/३)। **अनुवृत्ति** :- अङ्गस्य, प्रत्ययस्य।

शब्दार्थ :- झः = झि परस्मैपद तथा झ आत्मेपद के 'झ' के स्थान पर।

अर्थ :- अङ्ग से परे झ् के स्थान पर अन्त् आदेश होता है।

सूत्र :- (२) **अतो गुणे** (६/१/९४)।

अनुवृत्ति :- संहितायाम्, एकः पूर्वपरयोः, अपदान्तात्, पररूपम्।

अर्थ :- अकार अपदान्त से परे गुण हो तो दोनों के स्थान पर पररूप

गुण एकादेश हो जाता है।

पठसि

पठति के समान सब सूत्र लगकर पठसि रूप सिद्ध कर लें। केवल **'शेषे प्रथमः'** के स्थान पर, **युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः** (१/४/१०४) सूत्र भिन्न लगकर तिप् के स्थान पर सिप् आयेगा।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः** (१/४/१०४)

अर्थ :- युष्मद् शब्द उपपद में हो तथा एक अधिकरण होने पर चाहे युष्मद् का प्रयोग हो अथवा न हो, मध्यमपुरुष होता है।

जैसे :- त्वं पचसि = युष्मद् उपपद का प्रयोग।

पचसि = युष्मद् उपपद का प्रयोग नहीं।

पठथः

पठ् शप् थस् = पठसि के समान सभी सूत्र लगकर पठ् शप् थस् बना लेवें।

पठ् अ थस् = **लशक्वतद्धिते, हलन्त्यम्, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः** = से श् तथा प् का लोप।

पठथः = स् के स्थान पर पूर्ववत् विसर्ग करके मिला दें।

पठथ

यह मध्यमपुरुष बहुवचन का रूप है अतः सब कार्य पूर्ववत् होंगे केवल **'द्वेकयोर्द्विवचनैकवचने'** के स्थान पर **'बहुषु बहुवचनम्'** लगाकर 'थ' ले आवें।

पठामि (उत्तमपुरुष एकवचन)

पठ् अ मिप् = पठति के समान सभी सूत्र लगाकर, **'शेषे प्रथमः'** के स्थान पर **'अस्मद्युत्तमः'** सूत्र से मिप् ले आवें।

पठ् अ मि = **हलन्त्यम्, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः,** से मिप् के प् का लोप हुआ।

पठ मि = पठ् में अ मिलादें।

पठामि = **अङ्गस्य** अङ्ग के अधिकार में।

अतो दीर्घो यञि (७/३/१०१) से पठ् अङ्ग के अन्तिम अकार को दीर्घ आदेश, **अलोऽन्त्यस्य** परिभाषानुसार।

ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुतः = दीर्घ की परिभाषा।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **अतो दीर्घो यञि** (७/३/१०१)।

अनुवृत्ति :- अङ्गस्य, सार्वधातुके।

अर्थ :- अदन्त अङ्ग के अन्त्य अकार के स्थान पर दीर्घ हो जाता है यञादि सार्वधातुक परे रहते।

पठावः

पठा वस् = पठामि के समान सब सूत्र लगाकर पठावस् बना लो।

पठावः = स् को पूर्ववत् विसर्ग करो।

पठामः

पठामः = पठावस् के समान सब सूत्रों से पठामः बनेगा केवल **'द्वये-कयोर्द्विवचनैकवचने'** के स्थान पर **'बहुषु बहुवचनम्'** से 'मस्' लाना विशेष है।

पठ् धातु के समान वसँ, तपँ, त्यजँ, वदँ धातुओं की सिद्धि स्वयं लिखकर करें।

इस प्रकार आपने कृष्ण तथा फल सुबन्त रूप एवं पठ् धातु के तिङन्त लट् लकार के रूपों की सिद्धि देखी। इन सिद्धियों को मस्तिष्क में सभी प्रकार से सुदृढ़ कर लेवें। इनके उपस्थित रहने से आगे की सिद्धियां कठिन नहीं पड़ेंगी।

सुबन्त

शालीयः (शाला में होने वाला)

सर्वप्रथम

शालायां भवः = शालीयः।

शालीय शब्द में छ प्रत्यय तद्धित है, **कृत्तद्धितसमासाश्च** से प्रातिपदिक होकर, **ङ्याप्प्रातिपदिकात्** (४/१/१) सूत्र से प्रत्यय प्राप्ति का अधिकार प्राप्त हुआ।

पुनः यह निर्णय करने के लिए कि प्रत्यय 'शाला' शब्द से आये वा 'भव' से आये -

सूत्र :- **समर्थानां प्रथमाद्वा** (४/१/८२)

अर्थ :- सम्बद्ध अर्थ वाले शब्दों में प्रथम सम्बन्धित शब्द से तद्धित प्रत्यय होते हैं। इससे प्रथम शालायां शब्द से परे प्रत्यय होना निश्चित हुआ। 'शालायां' शब्द सप्तमी विभक्ति एकवचन में है अतः विभक्ति भिन्न अवस्था में इस प्रकार रखें = शाला ङि।

सूत्र :- **तत्र भवः** (४/३/५३)।

अर्थ :- तत्र अर्थात् सप्तमी सम्बन्धित प्रातिपदिक से भव (होने) अर्थ में यथाप्राप्त प्रत्यय होते हैं। यहां 'शाला ङि' सप्तमी सम्बन्धित भव (होने) अर्थ में है। तथा-

सूत्र :- **वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम्** (१/१/७२) इस सूत्र के संज्ञा प्रकरण में किये गये अर्थानुसार 'शाला' शब्द में आदि अच् 'आ' वृद्धि होने के कारण शाला शब्द वृद्धसंज्ञक है। 'आ' का नाम वृद्धि कैसे है यह **'वृद्धिरादैच'** (१/१/१) सूत्र के द्वारा संज्ञाप्रकरण में बताया जा चुका है।

शाला शब्द वृद्धसंज्ञक होने से आगे निम्न कार्य होगाः -

सूत्र :- **वृद्धाच्छः** (४/२/११३)।

अर्थ :- प्रथमासमर्थवृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक से शैषिक **'तत्र जातः'** आदि अर्थों में छ प्रत्यय होता है। **'तत्र भवः'** सूत्र शैषिक तत्र जातादि में ही है। अतः भव अर्थ में निम्न रूप बनाः -

शाला ङि छ

प्रश्न :- छ परे कैसे आया ?

उत्तर :- **'तद्धिताः'** सूत्र का अधिकार ५/४ की समाप्ति तक होने से छ तद्धित है। तथा **प्रत्ययः** (३/१/१) का अधिकार भी ५/४ की समाप्ति तक होने से तद्धित कहलाने वाले शब्द प्रत्यय हुए। अतः उन्हें तद्धित प्रत्यय कहना चाहिए।

सूत्र :- **परश्च** (३/१/२)।

अर्थ :- प्रत्यय परे होता है। अतः उपरिलिखित छ प्रत्यय परे आकर- शाला ङि छ रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र :- **कृत्तद्धितसमासाश्च** (१/२/४६)।

अर्थ :- कृत् प्रत्ययान्त, तद्धितप्रत्ययान्त और समास की प्रातिपदिक संज्ञा होती है। इससे इस छ (तद्धित) प्रत्ययान्त 'शाला ङि छ' शब्द रूप की प्रातिपदिक संज्ञा हुई।

सूत्र :- **सुपो धातु प्रातिपदिकयोः** (२/४/७१)।

अर्थ = धातु और प्रातिपदिक से अवयव सुप् का लुक् हो जाता है। इससे 'शाला ङि छ' प्रातिपदिक के अवयवभूत ङि (सुप्) का लुक् हो जाता है।

सूत्र :- **प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः** (१/१/६०) इस सूत्र से ङि प्रत्यय के अदर्शन की लुक् संज्ञा हुई। अतः आगे शेष रहा = शाला छ।

सूत्र :- **अङ्गस्य** (६/४/१) = अङ्ग के अधिकार में-

सूत्र :- **आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम्** (७/१/२)।

अर्थ :- प्रत्यय के आदि में स्थित फ आदि के स्थान पर आयनादि पांच आदेश होते हैं।

सूत्र :- **यथासंख्यमनुदेशः समानाम्** (१/३/१०)। इस सूत्र से समानसंख्य छ के स्थान पर ईय् आदेश हो जाता है अतः शाला ईय् अ यह रूप बना।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **यचि भम्** (१/४/१८) इससे शाला शब्द की भ संज्ञा हुई। जिससे-

सूत्र :- **यस्येति च** (६/४/१४८)।

शब्दार्थ :- यस्य = अ, इ इन दोनों वर्णों का ईति = अर्थात् ई (ङीपादि) परे रहते।

अनुवृत्ति :- अङ्गस्य, भस्य, लोपः, तद्धिते।

अर्थ :- भ संज्ञक अङ्ग के अन्त में स्थित इवर्ण और अवर्ण का लोप हो जाता है ईकार प्रत्यय तथा तद्धित के परे रहते। अतः आगे रूप बना = शाल् ईय् अ मिला देने पर शालीय बना।

सूत्र :- **कृत्तद्धितसमासाश्च** (१/२/४६) से तद्धित प्रत्ययान्त शालीय शब्द की प्रातिपदिक संज्ञा हुई। प्रातिपदिक संज्ञा होने पर शालीय शब्द से पूर्व प्रदर्शित कृष्ण के समान सुँ आकर विसर्ग बना। इस प्रकार शालीयः सिद्ध होता है।

सूत्रों को सामने लिखकर शालीय की सिद्धि

शालीयः

संस्कृत में अर्थ :- शालायां भवः = शालीयः।

शाला ङि भव सुँ = ऊपर अर्थ में शालायां शब्द सप्तम्यन्त तथा भवः शब्द प्रथमान्त है। अतः यहां विग्रहावस्था में शाला से ङि तथा भव से सुँ को दिखाया गया है।

शाला ङि छ = अब **ङ्याप्प्रातिपदिकात्** (४/१/१) के अधिकार में प्रत्ययोत्पत्ति होगी, सो प्रत्यय 'भव' से हो वा 'शाला' से हो इसका निर्णय **तद्धिताः** (४/१/७६) से अधिकृत प्रत्ययों के लिए **समर्थानां प्रथमाद्वा** (४/१/८२) ने दिया सो प्रथम शाला शब्द से प्रत्यय प्राप्त हुआ।

शाला ङि छ = **शेषे** (४/२/९१) शैषिक **तत्र भवः** (४/३/५३) के अर्थ में **वृद्धाच्छः** (४/२/११३) से छ प्रत्यय आया, **वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम्** (१/१/७२) वृद्ध संज्ञक की परिभाषा बताई। **प्रत्ययः, परश्च** (३/१/१,२) से प्रत्यय परे आया।

शाला छ = **कृत्तद्धितसमासाश्च** (१/२/४६) से 'शाला ङि छ' की प्रातिपदिक संज्ञा हुई। **सुपो धातुप्रातिपदिकयोः** (२/४/७१) सूत्र से प्रातिपदिक के अंशभूत सुप् 'ङि' को लुक् प्राप्त हुआ। **प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः** (१/१/६१) से प्रत्यय के अदर्शन की लुक् संज्ञा।

शाला ईय् अ = **यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्** (१/४/१३) से छ प्रत्यय के परे रहते 'शाला' की अङ्ग संज्ञा। **अङ्गस्य** (६/४/१) अधिकार सूत्र **आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम्** (७/१/२) से फ आदि प्रत्ययों के स्थान में आयन् इत्यादि आदेश, **यथासंख्यमनुदेशः समानाम्** (१/३/१०) ने बताया कि समसंख्यक स्थानियों की जगह समसंख्यक आदेश क्रमशः होते हैं, सो छ को ईय् प्राप्त।

शाल् ईय् अ = 'अङ्गस्य' पुनः अङ्ग के अधिकार में **यचि भम्** (१/४/१८) से 'ईय्' परे रहते 'शाला' की भ संज्ञा, **यस्येति च** (६/४/१४८) से भ संज्ञक शाला के अन्तिम आ का लोप **अदर्शनं लोपः** (१/१/५६) लोप की परिभाषा।

शाल् ईय् अ = मिला देने पर शालीय बना।

शालीयः = शेष **कृत्तद्धितसमासाश्च** से प्रातिपदिक तो है ही अतः **ङ्याप्प्रातिपदिकात्** से अधिकृत सुँ लाकर पूर्वदर्शित कृष्ण सुँ के सदृश् विसर्ग बना लेवें। इसी प्रकार माला से मालीयः बनावें।

नोट :- इस सिद्धि को सम्यक्तयामस्तिष्क में जमा लेवें; क्योंकि समस्त तद्धितान्त शब्दों की सिद्धियां प्रायः इसी प्रकार होंगी।

तिङन्त सिद्धि = अचैषीत् (उसने चयन किया)

धातु = चिञ् चयने।

चि = **भवादयो धातवः, हलन्त्यम्, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः** से चिञ् के ञ् की इत् संज्ञा तथा उसका लोप।

चि लुँङ् = **धातोः** (३/१/९१) धातु के अधिकार में, **भूते** (१/२/८४) भूतकाल में, **लुँङ्** (३/२/११०) चिञ् धातु से लुँङ् प्रत्यय, **प्रत्ययः, परश्च** (३/१/१,२) प्रत्यय धातु से परे आया। **लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः** (३/४/६९) सूत्र से कर्तृवाच्य में लुँङ् लकार।

चि च्लि लुँङ् = **च्लि लुँङि** (३/१/४३) लुँङ् से परे रहते च्लि प्रत्यय।

चि सिच् लुँङ् = **च्लेः सिँच्** (३/१/४४) च्लि के स्थान में सिँच् आदेश। **अनेकाल्शित्सर्वस्य** (१/१/५४) से सारे च्लि को हुआ।

चि स् ल् = **उपदेशेऽजनुनासिक इत्, हलन्त्यम्, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः** से सिँच् और लुँङ् के अनुबन्धों का लोप।

चि स् तिप् = **लस्य** (३/४/७७) **तिप्तस्झिसिप्थस्थमिब्वस्मस्तातांझथा-साथांध्वमिड्वहिमहिङ्** (३/४/७८) से ल् के स्थान में तिपादि १८ प्रत्यय प्राप्त। **लः परस्मैपदम्** (१/४/९८) ल् के स्थान में आनेवाले उक्त सभी प्रत्ययों की परस्मैपद संज्ञा। इसका अपवाद **तङानावात्मनेपदम्** (१/४/९९) तङ् और

आन की आत्मनेपद संज्ञा। इस प्रकार सूत्रस्थ १८ प्रत्ययों में पहले ६ प्रत्ययों का नाम परस्मैपद हुआ। **शेषात्कर्तरि परस्मैपदम्** (१/३/७८) चिञ् शेष धातु से ल् के स्थान पर परस्मैपद संज्ञक प्रत्यय प्राप्त। **तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः** (१/४/१००) तिङ् का पुरुषों में विभाग। **शेषे प्रथमः** (१/४/१०७) प्रथम पुरुष प्राप्त। **तान्येकवचन-द्विवचनबहुवचनान्येकशः** (१/४/१०१) तीन प्रत्ययों की क्रमशः एकवचन, द्विवचन, बहुवचन संज्ञाएं। **द्वेकयोर्द्विवचनैकवचने** (१/४/२२) एक के कहने में एकवचन। **प्रत्ययः, परश्च** प्रत्यय परे आया।

अट् चि स् तिप् = **यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्** (१/४/१३) **अङ्गस्य** (६/४/१) अङ्ग के अधिकार में, **लुँङ्लँङ्लृँङ्-क्ष्वडुदात्तः** (६/४/७१) **आद्यन्तौ टकितौ** (१/१/४५) अङ्ग को अट् का आगम आदि में हुआ।

अ चि स् ति = **हलन्त्यम्, तस्य लोपः, अदर्शनं लोपः** से अट् और तिप् के अन्त्य हल् ट् और प् का लोप।

अचि स् त् = **इतश्च** (३/४/१००) ति के इ का भी लोप।

अचि स ईट् त् = **आर्धधातुकं शेषः** (३/४/११४) सिच् (स्) की आर्धधातुक संज्ञा, **आर्धधातुकस्येड्वलादेः** (७/२/३५) से स् को ईट् आगम प्राप्त। परन्तु **एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्** (७/२/१०) से निषेध हुआ। **तिङ्शित्सार्वधातुकम्** (३/४/११३) त् का नाम सार्वधातुक **अपृक्त एकाल्प्रत्ययः** (१/२/४१) से त् का नाम अपृक्त भी **अस्तिसिचोऽपृक्ते** (७/३/९६) **आद्यन्तौ टकितौ** (१/१/४५) से त् को ईट् आगम प्राप्त होकर आदि में बैठा।

अ चि स् ई त् = **हलन्त्यम्, तस्य लोपः,** ईट् के ट् का लोप।

अ चै स् ईत् = पुनः **अङ्गस्य,** अङ्ग के अधिकार में, **सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु** (७/२/१) से वृद्धि प्राप्त **इको गुणवृद्धी** (१/१/३) इक् के स्थान में गुण-वृद्धि हों, **स्थानेऽन्तरतमः** (१/१/४९)

वृद्धिरादैच् (१/१/१) आ ऐ औ इनका नाम वृद्धि है।

अचैषीत् = **आदेशप्रत्यययोः** (८/३/५९), **इण्कोः** (८/३/५७) इण् और कवर्ग से परे प्रत्यय और आदेश के स् को ष् हो। सो यह मिला देने पर 'अचैषीत्' रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रार्थ

सूत्र :- **च्लि लुङि** (३/१/४३)।
अर्थ :- लुङ् परे रहते धातुमात्र से परे च्लि प्रत्यय होता है।

सूत्र :- **च्लेः सिच्** (३/१/४४)।
अर्थ :- च्लि प्रत्यय के स्थान पर सिच् आदेश होता है।

सूत्र :- **लुँङ्लँङ्लृँङ्क्ष्वडुदात्तः** (६/४/७१)।
अर्थ :- लुङादि परे रहते अङ्ग को अट् का आगम होता है, और वह उदात्त स्वर वाला होता है।

सूत्र :- **इतश्च** (३/४/१००)।
अर्थ :- ङित् लकार सम्बन्धी इकार का नित्य लोप होता है। जैसे यहां लुङ् लकार ङित् है। उससे सम्बन्धित 'ति' के इ का लोप होगा।

सूत्र :- **अस्तिसिचोऽपृक्ते** (७/३/९६)।
अर्थ :- अस् और सिजन्त अङ्ग से परे हलादि अपृक्त सार्वधातुक को ईट् का आगम होता है।

सूत्र :- **सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु** (७/२/१)।
अर्थ :- परस्मैपद परे जिसके ऐसा सिच् परे हो तो इगन्त अङ्ग को वृद्धि होती है।

अनैषीत्, अजैषीत् की सिद्धि इसी प्रकार है स्वयं लिखकर करें।

इन सिद्धियों के करने से अन्य तिङन्त रूपों की सिद्धि करने में कठिनता न होगी।

सप्तमप्रकरणम्

वाच्य-प्रकरणम्

संस्कृत भाषा में तीन वाच्य होते हैं।
(१) कर्त्तृवाच्य, (२) कर्मवाच्य, (३) भाववाच्य।

१. कर्त्तृवाच्य

कर्त्तृवाच्य में कर्त्ता के अनुसार क्रिया होती है। यदि कर्त्ता एक वचन में होता है तो क्रिया भी एकवचन में होगी। कर्त्ता द्विवचन में हो तो क्रिया भी द्विवचन में तथा कर्त्ता बहुवचन है तो क्रिया बहुवचन की ही होगी।

	कर्त्ता	कर्म	क्रिया
जैसे =	रामः	पुस्तकं	पठति।
	रामौ	पुस्तकं	पठतः।
	रामाः	पुस्तकं	पठन्ति।

यहां कर्त्ता राम में परिवर्तन से पठति आदि क्रिया में भी परिवर्तन है।

कर्त्ता	कर्म	क्रिया
रामः	पुस्तकं	पठति।
रामः	पुस्तके	पठति।
रामः	पुस्तकानि	पठति।

इन वाक्यों में कर्म परिवर्तन होने पर भी क्रिया में कोई परिवर्तन नहीं हो रहा है। ऐसे वाक्यों का नाम कर्त्तृवाच्य है।

कर्त्तृवाच्य में कर्ता की प्रधानता होती है। तदनुसार क्रिया होती है।

अभ्यास

१. कर्त्तृवाच्य किसे कहते हैं ?
२. कर्त्तृवाच्य में कर्त्ता एकवचन में तथा कर्म बहुवचन में हो तो क्रिया एकवचन में होगी या बहुवचन में ?

२. कर्मवाच्य

कर्मवाच्य में क्रिया कर्म के अनुसार होती है। इस अवस्था में कर्म परिवर्तित होकर कर्त्ता बन जाता है। नए कर्त्ता (कर्म से बने कर्त्ता) में एकवचन हो तो क्रिया में भी एकवचन। नवीन कर्त्ता में द्विवचन हो तो क्रिया भी द्विवचन में होगी एवं बहुवचन में कर्त्ता हो तो क्रिया में भी बहुवचन होगा। ऐसा सर्वत्र जानें। जैसे -

कर्त्ता	कर्म	क्रिया
रामेण	पुस्तकं	पठ्यते।
रामेण	पुस्तके	पठ्येते।
रामेण	पुस्तकानि	पठ्यन्ते।

(१) इन उदाहरणों में नए कर्त्ता के परिवर्तन से क्रिया में परिवर्त्तन स्पष्ट दिखाई दे रहा है।
(२) पुराने कर्त्ता में तृतीया विभक्ति होती है।
(३) क्रिया में यक् और आत्मनेपद के प्रत्यय होते हैं।
(४) नए कर्त्ता में प्रथमा विभक्ति होती है।

३. भाववाच्य

भाववाच्य में क्रिया न कर्त्ता के अनुसार होगी न कर्म के अनुसार, अपितु सदैव क्रिया एकवचन में होती है।
जैसे- रामेण आस्यते।
रामैः आस्यते।
रामाभ्याम् आस्यते।
(१) भाववाच्य में भाव की प्रधानता होती है। तदर्थ क्रिया सदा एकवचन में होती है।
(२) क्रिया में यक् और आत्मनेपद के प्रत्यय होते हैं।
(३) कर्त्ता में तृतीया विभक्ति होती है।

अभ्यास (कर्त्तृवाच्य, कर्मवाच्य दोनों में)

१. मैं पुस्तक पढ़ता हूं { अहं पुस्तकं पठामि (कर्त्तृवाच्य)
मया पुस्तकं पठ्यते (कर्मवाच्य)

२. वह गांव को जाता है { सः ग्रामं गच्छति (कर्त्तृवाच्य)
तेन ग्रामः गम्यते (कर्मवाच्य)

३. वे सब भोजन खाते हैं { ते भोजनं खादन्ति (कर्त्तृवाच्य)
तैः भोजनं खाद्यते (कर्मवाच्य)

कर्त्तृवाच्य और भाववाच्य

कर्त्तृवाच्य = स आस्ते।
भाववाच्य = तेन आस्यते। } वह बैठता है।

कर्त्तृवाच्य = रामः हसति।
भाववाच्य = रामेण हस्यते। } राम हंसता है।

कर्त्तृवाच्य = सः स्वपिति।
भाववाच्य = तेन सुप्यते। } वह सोता है।

उपरिलिखित नियमों को अभ्यास में प्रदत्त वाक्यों को देखकर दृढ़ करें।

शुद्ध करें

१. मोहनः पुस्तकं पठ्यते।
२. ते विद्यालयं गम्यते।
३. रामः भोजनं क्रियते।
४. बालकः आस्यते।
५. मया कार्यं करोमि।
६. तेन ओदनं खादति।

अष्टम प्रकरणम्

स्वरप्रकरणम्

वर्णों के उच्चारण का धर्म स्वर कहलाता है। उदात्त, अनुदात्त, स्वरित स्वर तीन होते हैं।

(१) उदात्त स्वर का कोई चिह्न नहीं होता। जैसे- कर्त्तव्यम् में त का अ उदात्त है। अतः उसमें कोई चिह्न नहीं है।

(२) अनुदात्त का चिह्न नीचे पड़ी लकीर है। यथा क॒र्त्तव्य॑म् शब्द के क के अ में नीचे अनुदात्त की लकीर विद्यमान है।

(३) स्वरित का चिह्न ऊपर खड़ी लकीर है। जैसे क॒र्त्तव्य॑म् शब्द में य के अ के ऊपर खड़ी लकीर स्वरित चिह्नार्थ है।

किसी भी शब्द में स्वर लगाने के लिए सर्वप्रथम उदात्त या स्वरित का ज्ञान कर लें।

उदात्त या स्वरित स्वर को निम्न प्रकार से जानें-

नोट :- उदात्तों को छांटने के लिए आगे उदात्त स्वरों पर (x) ऐसा चिह्न लगाया जाएगा। क्योंकि उदात्त का कोई चिह्न नहीं होता, सो केवल सरलता से ज्ञान हो एतदर्थ ही हम इसको लगाएंगे।
जैसे- क॒र्त्त(x)व्य॑म् में त के अ के नीचे है।

सूत्र :- धातोः (६/१/१५७)।

अर्थ :- धातु का अन्त्य अच् उदात्त होता है। यथा प(x)च् में अ
धातु प(x)च
प्रत्यय अति } पचति में प का अन्तिम अच् अ उदात्त है।

प्रश्न :- पच् के प में स्थित अ अन्तिम अच् कैसे हुआ ? पच् में तो केवल एक ही अच् है।

उत्तर :- आद्यन्तवदेकस्मिन् (१/१/२०)। अर्थ = एक में भी आदि और अन्त के समान कार्य होता है। जैसे किसी का एक ही पुत्र हो, और उससे कोई पूछे कि आपका ज्येष्ठ पुत्र कौन सा है ? तो उसका यही उत्तर होगा- हमारा तो एक ही पुत्र है। अतः बड़ा भी यही है और छोटा कहो तो भी यही है। इसी

प्रकार यहां भी समझें। यहां पच् धातु में भी एक अच् है। अतः प्रकृत सूत्र से कार्य आने पर आदिवत् भी माना जाएगा और अन्तवत् भी। चुंकि धातोः सूत्र से धातु के अन्त्य अच् को उदात्त होता है। इसलिए यहां पच् में अ अन्तवत् माना गया।

सूत्र :- **आद्युदात्तश्च** (३/१/३)। अर्थ = प्रत्यय का आदि अच् उदात्त होता है। जैसे- कर्त्तव्यम् में स्थित तव्य प्रत्यय का आदि अच् त में अ उदात्त है।

परन्तु

सूत्र :- **अनुदात्तौ सुप्पितौ** (३/१/४) अर्थ = सुप् और पित् प्रत्यय अनुदात्त होते हैं। अतः उपर्युक्त पचति में शप् का अ और तिप् का इ अनुदात्त है।

सूत्र :- **तित् स्वरितम्** (६/१/१७६)। अर्थ = त् जिसका इत् है, उस प्रत्यय का अच् स्वरित होता है। कार्यम् में ण्यत् प्रत्यय है। सो त् इत् होंने से य में अ स्वरित होगा। कार्य॑म्।

सूत्र :- **ञ्नित्यदिर्नित्यम्** (६/१/१९१)।

अर्थ :- ञ् और न् जिन प्रत्ययों में इत् हों ऐसे प्रत्ययों के परे रहते सम्पूर्ण शब्द का आदि अच् उदात्त हो जाता है। जैसे औपमन्यवः। इस प्रकार अष्टाध्यायी के स्वर प्रकरणस्थ सूत्रों के द्वारा एवं फिट्सूत्रपाठादि के द्वारा सर्वप्रथम उदात्त एवं स्वरित छांट लेवें। पुनः -

सूत्र :- **अनुदात्तं पदमेकवर्जम्** (६/१/१५३)। अर्थ = पद में एक (उदात्त या स्वरित) को छोड़कर शेष अच् अनुदात्त होते हैं। जैसे कर्त्तव्यम्, पचति, कार्यम्, औपमन्यवः। ऊपर उदाहरणार्थ प्रदर्शित शब्दों में एक उदात्त और स्वरित को छोड़कर शेष अच् अनुदात्त होते हैं। जैसे क॒र्त्तव्य॑म्, पच॒ति॒, का॒र्य॑म्, औप॒म॒न्य॒व॒ः। ऊपर उदाहरणार्थ प्रदर्शित शब्दों में एक उदात्त (x) व स्वरित (॑) को छोड़कर शेष सब (_) पड़ी लकीर वाले

अच् अनुदात्त हैं।

उदात्त से परे अनुदात्त को स्वरित होना

सूत्र :- उदात्तादनुदात्तस्य स्वरितः (८/४/६५)।

अर्थ :- उदात्त से परे अनुदात्त को स्वरित हो जाता है।

जैसे :- क॒र्त्तव्य॑म्, प॒च॑ति॒, औ॒प॑म॒न्य॒व॒ः इनमें ऊपर प्रदर्शित अनुदात्त न रहकर स्वरित आदेश हो गया।

स्वरित से परे अनुदात्त को एकश्रुति होना

सूत्र :- **स्वरितात् संहितायामनुदात्तानाम्** (१/२/३९)।

अर्थ = संहिता में स्वरित से परे अनुदात्तों को एकश्रुति हो जाती है। अर्थात् स्वरित से परे अनुदात्त नहीं बोला जाता। प्रत्युत स्वरभेद के बिना सब अच् बोले जाते हैं। जैसे औप॑मन्यवः में म य व के अकार स्वरित से परे होने से अनुदात्त नहीं रहते।

अभ्यास

१. आद्युदात्तश्च, अनुदात्तौ सुप्पितौ, तित्स्वरितम् सूत्रों के अर्थ लिखो।
२. तीनों स्वरों के चिह्न बताओ।
३. उदात्त से परे अनुदात्त के स्थान पर क्या होता है?
४. स्वर किसे कहते हैं?
५. स्वर कितने होते हैं?

ओ३म् शम्